संरक्षण	:	सुश्री वृन्दा सरूप आई०ए०एस० राज्य परियोजना निदेशक, उ०प्र० सभी के लिए शिक्षा परियोजना
निर्देशन	:	१. श्री महेश चन्द्र पंत शिक्षा निदेशक (बेसिक) २. श्री शरदिन्दु निदेशक राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद
मार्गदर्शन	:	१. श्रीमती कल्पना अवस्थी आई०ए०एस० अपर राज्य परियोजना निदेशक (डी०पी०ई०पी०) २. श्रीकृष्ण मोहन त्रिपाठी अपर राज्य परियोजना निदेशक (बी०ई०पी०)
परामर्श	:	१. श्री सुबीर शुक्ला परामर्शी, नई दिल्ली
संयोजन	:	उत्तर प्रदेश सभी के लिए शिक्षा परियोजना राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, उत्तर प्रदेश
लेखन एवं सम्पादन	:	नवीन चन्द्र कबड्वाल, सर्वेन्द्र विक्रम बहादुर सिंह, सुरेश कुमार सोनी, अशोक कुमार पाण्डेय, वीरेन्द्र दुबे, मुकेश भार्गव, गुरु प्रसाद त्रिपाठी, राज सिंह, सुदर्शन यादव, जय प्रकाश ओझा, इन्द्रदेव त्रिवेदी, मदनमोहन पाण्डेय, अवनीश कुमार यादव, कुमारी लता केडियाल, देवनाथ द्विवेदी, श्याम प्रकाश श्रीवास्तव, कुमारी स्वाती श्रीवास्तव, जगदीश प्रसाद पाठक, देवेन्द्र सिंह, आलोक कुमार सिंह, रवि शंकर पाण्डेय, गोपी कृष्ण मिश्र, श्रीमती मंजू लता, सहदेव गंगवार, राजेश कुमार यादव, शैलेश बैंजमिन, अब्दुल वाहिद खां, झनकार नाथ शुक्ला
कम्प्यूटर कम्पोजिंग	:	मनोज गोयल, दीपक कुमार

प्राक्कथन

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत प्राथमिक विद्यालयों में पढ़ने वाले बच्चों की शैक्षिक सम्प्राप्ति का मूल्यांकन कराया गया था। इसके परिणाम यह रहे हैं कि बच्चे किसी कक्षा के लिए निर्धारित भाषा और गणित विषय की दक्षतायें और कौशल उस सीमा तक नहीं सीख पाते जितना उन्हें सीख सकना चाहिए। बच्चों का सीखना कई कारणों से प्रभावित हो सकता है। स्कूल और कक्षा का वातावरण, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक, शिक्षण सामग्री, सिखाने और सीखने के लिए समय, शिक्षक की भूमिका आदि। इन संभव कारकों को ध्यान में रखते हुए गुणवत्तापरक परिवर्तन को लक्ष्य बनाकर विभिन्न उपाय डी०पी०ई०पी० के अन्तर्गत किये जा रहे हैं। प्राथमिकता और क्रम के बावजूद पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तक, शिक्षक प्रशिक्षण, शिक्षकों को सहयोग और समर्थन की प्रणाली, सामग्री की व्यवस्था सब एक दूसरे से गहराई से जुड़े हुये हैं। इसके आधार पर 'पाठ्यक्रम' का संशोधन कर नवीन पाठ्यक्रम तथा इस पर आधारित नवीन पाठ्यपुस्तकें विकसित की गयीं।

शिक्षक प्रशिक्षण के प्रथम चक्र में आप सभी ने उत्साह प्रदर्शित किया था । मूलतः यह प्रशिक्षण शिक्षक शिक्षिकाओं को अभिप्रेरित कर, उनकी आत्मछवि को परिष्कृत कर सकारात्मक परिवर्तन के लिए उन्मुख करना था, उनके बृहत्तर सामाजिक दायित्व के प्रति संवेदनशील बनाना था। कक्षा का वातावरण अधिक प्राणवान बनाने और अपेक्षया कम सुविधासम्पन्न बच्चों खासकर बच्चियों के लिए भी उदार और ग्राह्य बनाने की दिशा में प्रयत्न किया गया था।

इस क्रम में प्रशिक्षण का द्वितीय चक्र आयोजित किया जा रहा है। यह विश्वास करने के पर्याप्त कारण हैं कि शिक्षक सचमुच काम करना चाहते हैं, वे जिन परिस्थितियों में हैं, वहाँ अपनी सामर्थ्य भर प्रयत्न करते हैं किन्तु दिक्कतें भी हैं। शिक्षक एक साथ कई कक्षायें संभालते हैं, कक्षाओं में भी खासकर १,२ और ३ में बच्चों की संख्या ज्यादा है। बच्चों में दक्षताओं और कौशलों के विकास करने के लिए कौन से तरीके और किस तरह की सामग्री इस्तेमाल की जाये, इसकी पर्याप्त जानकारी नहीं है। इस गंभीर समस्या के शैक्षणिक हल ढूँढ़ना आवश्यक है। इस प्रयास में हमें अपने आप से कई प्रश्न पूछने होंगे।

बच्चे हमारी परम्परा के वाहक हैं और भविष्य की आशा भी। उत्सुकता से चमकती आँखों और अपरिमित ऊर्जा वाले बच्चे सब कुछ सीखने की ललक लेकर आते हैं, आपके पास, और जब स्कूल उन्हें निराश करता है तो उनकी रूचि खत्म हो जाती है और कई बार वे स्कूल की दुनिया से वापस चले जाते हैं।

बच्चे सीखते कैसे हैं? सीखने की प्रक्रिया कैसे घटित होती है? वे कौन से कारक हैं जो सीखने–सिखाने को आसान/कठिन बना देते हैं? कक्षा में बच्चे सिर्फ निष्क्रिय श्रोता भर हैं या उनकी जिज्ञासा, उनके सवालों के लिए भी थोड़ी सी जगह है? क्या वे जैसे भाषा सीखते हैं उसी तरह गणित भी सीखते हैं? यह विश्वास कि बच्चियाँ गणित में कमजोर होती हैं, सही है? कक्षा का वातावरण कैसा हो? कक्षा में शिक्षक के काम को आसान कैसे बनाया जा सकता है? इन बिन्दुओं

पर सोचने और समझ बनाने की दृष्टि से प्रशिक्षण पैकेज का पहला भाग 'विचार–पत्रक' के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

'विचार–पत्रक' का अंतिम भाग आपकी अपनी शिक्षक–संदर्शिका है। इसका स्वरूप ऐसा रखा गया है कि आप इसमें अपनी ओर से जोड़ सकें, अपने अनुभव दर्ज कर सकें, इस संदर्शिका को समय के साथ समृद्ध भी बना सकें। कक्षा में, कक्षा के बाहर भी किस तरह की 'सामग्री' और 'गतिविधि' का उपयोग कर सीखने–सिखाने को आसान और रुचिकर बनाया जा सकता है, इसके लिये 'गतिविधि बैंक' दिया जा रहा है। इसमें जो क्रियाकलाप दर्ज हैं उनके साथ सुविधा यह है कि इनमें फेरबदल किया जा सकता है, थोड़े से बदलाव के साथ कई कक्षाओं में इस्तेमाल हो सकता है, सिखाने के साथ–साथ, बच्चों ने सीखा या नहीं इसकी जाँच परख भी चलती रहती है।

कक्षा २ और ३ के लिये 'गणित' की नवीन पाठ्यपुस्तकें आप तक पहुँच रही हैं। आशा है, बच्चे गणित सीखने में ज्यादा रुचि लेंगे, अच्छी तरह से सीख सकेंगे। इस बार प्रशिक्षण में आपसे इस बिन्दु पर भी विस्तार से चर्चा की जायेगी। लेकिन सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को ज्यादा कारगर बनाने का प्रयास यहीं समाप्त नहीं हो जाता है बल्कि अभी तो यह एक शुरुआत है। इसी कड़ी में अन्य कक्षाओं और विषयों की नवीन पाठ्यपुस्तकों पर आधारित प्रशिक्षण आयोजित किया जायेगा जिनमें "भाषा–शिक्षण/पर्यावरणीय अध्ययन" प्रशिक्षण, बहु–कक्षा शिक्षण, मूल्यांकन, पद्धति भी प्रमुख बिन्दु होंगे।

यह उल्लेख भी प्रासंगिक होगा कि इस प्रशिक्षण पैकेज को लिखने, इसका प्रायोगिक परीक्षण कर संपादित करने का कार्य आप के बीच से आये प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षक–शिक्षिकाओं ने किया है। इस प्रशिक्षण और सामग्री; खास कर विचार पत्रकों पर; आप की प्रतिक्रिया और सुझाव आमंत्रित हैं।

आप सबको शुभकामनायें, इस आग्रह के साथ कि **अगर बच्चे उस तरह नहीं सीख पाते जैसे उन्हें सिखाया गया, तो क्यों न उन्हें उस तरह सिखाया जाय जैसे वे सीख सकें।**

भवदीया,

वृन्दा सरुप, आई.ए.एस.

राज्य परियोजना निदेशक

विद्या भवन, निशातगंज

लखनऊ

अनुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

१. बच्चे

२. सीखने की प्रक्रिया

३. शिक्षक–शिक्षिका

४. पाठ्यक्रम–पाठ्यपुस्तकें

५. गतिविधि क्या है?

६. भाषा

७. गणित

८. पर्यावरणीय अध्ययन

९. सामग्री

१०. अनजाने–संदेश

११. मूल्यांकन

१२. विद्यालय विकास

१३. समेकित शिक्षा

१४. मेरी खुद के पढ़ाने की संदर्शिका (M.O.T.M.)

इस पुस्तिका का प्रयोग कैसे करें

यह सामग्री उस समझ का सैद्धांतिक रूप प्रस्तुत करती है जिसे प्रशिक्षण के दौरान आप और प्रशिक्षक मिल कर व्यावहारिक, क्रियाशील व अनुभव आधारित तरीकों से उभारेंगे। हर शिक्षक इस समझ को गहराई से परखें, आत्मसात करें व वास्तव में कक्षा में उतारें – यही हमारा प्रयास है। चूंकि सीमित अवधि के प्रशिक्षण में इस समझ का परिचय ही हो सकता है, इसका लिपिबद्ध रूप में उपलब्ध होना आवश्यक था और इसीलिये इसे पुस्तिका के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो प्रशिक्षण के बाद भी आपके साथ रहे व आप इसे अपने समय में, अपनी जरूरत के अनुसार उपयोग कर सकें।

यहां दिये गये लेख केवल सैद्धांतिक ही नहीं हैं – यह अनेकों शिक्षकों व विशेषज्ञों के व्यावहारिक अनुभवों का निचोड़ हैं, और पूर्णतः कक्षा में क्रियान्वयन को संभव बनाने के दृष्टिकोण का समावेश करते हैं। यह पहचाना गया है कि वर्तमान में शिक्षक कठिन परिस्थितियों के तहत काम करते हैं और उन्हें ऐसी समझ की आवश्यकता है, जो उनके द्वारा कक्षा में क्रियान्वित की जा सके। इसीलिये पुस्तिका के साथ आपको दी गई दूसरी सामग्री में विभिन्न गतिविधियों का समावेश है जिन्हें आप अपनी कक्षा में कर सकते हैं।

तो कैसे करेंगे इस सामग्री का प्रयोग ? कुछ सुझाव :

- ❖ यह आपकी अपनी ***पुस्तिका*** है, अपना नाम व पता जरूर लिखें।
- ❖ इसे केवल एक बार न पढ़ें – कई बार पढ़ें, अलग–अलग हिस्सों पर ध्यान देते हुए आगामी वर्ष में समय–समय पर इसे देखते रहें।
- ❖ आपके मन में उठते विचार, मत या कक्षा में क्रियान्वयन हेतु सुझावों को नोट करते जायें।
- ❖ कक्षा में काम करने के बाद अगर आपके मन में सवाल उठें तो उन्हें ध्याान में रखते हुए पुस्तिका के लेखों को दुबारा देखें।
- ❖ हो सके तो साथी शिक्षकों से भी इन बिंदुओं पर चर्चा करें – विशेष तौर पर प्रशिक्षण व मासिक बैठकों के दौरान।
- ❖ शिक्षक स्वदर्शिका वाला हिस्सा बहुत महत्वपूर्ण है। बाहरी सुझाव, प्रशिक्षण व इस प्रकार के लेख हमेशा सामान्य से ही होते हैं। इन्हें अपने लिये, व अपनी कक्षा के लिये विशिष्ट रूप देना आपका काम है, जिसमें स्वदर्शिका बहुत सहायक सिद्ध होगी।
- ❖ और अंत में, समय–समय पर इस पुस्तिका का उपयोग करते रहें यह जांचने के लिये कि – क्या हमारी कक्षा पहले से बेहतर बन रही है ?

इस रोचक व चुनौतीपूर्ण कार्य में आपको हमारी शुभकामनायें।

बच्चे

बच्चा क्या है ?

कुछ सवाल ऐसे होते हैं कि हमारे जीवन की दिशा ही तय कर देते हैं, उनमें से एक है – बच्चा क्या है ? इसका उत्तर बहुत कुछ निर्धारित कर देता है कि अपने आगे के व्यवसायिक जीवन में हम शिक्षक के रूप में कैसे काम करते हैं। लोग कहते हैं "सीखने की कोई सीमा नहीं है" "बच्चे खाली घड़े के समान होते हैं जिन्हें भरना है"। "बच्चे गीली मिट्टी के समान हैं जिन्हें आकार देना है।" "बच्चों का मन कोरी स्लेट की तरह होता है"। जिस पर अनुभव और ज्ञान को लिखना है।

क्या ये कथन वास्तव में सही हैं ? बच्चा स्कूल में अपने साथ बहुत सारी जानकारियां/अनुभवों को लेकर आता है। जैसे अपने आस–पास की चीजों की जानकारी, छोटा–बड़ा, कम–ज्यादा का ज्ञान आदि । इसलिये हम उसे "खाली घड़ा" नहीं मान सकते और न ही हम उसे बिल्कुल वैसा बना सकते हैं जैसा हम चाहते हैं। यदि हमारे ढालने से वे ढलते तो हमारा स्कूल देवताओं, पैगम्बरों का कारखाना होता। कौन अपने बच्चों को महान नहीं बनाना चाहता परंतु क्या सभी बन पाते हैं ? दूसरी बात, हम नहीं चाहते कि सारे बच्चे एक ही सांचे में ढलें क्योंकि हम जानते हैं कि हर बच्चे में सीखने की अलग–अलग क्षमता होती है जिसको सीमा में बांधना कठिन है। सीखने की कोई सीमा नहीं है।

हमारा प्रयास तो यह होना चाहिये कि हम बच्चे के लिये सीखने के समान अवसर और अनुकूल वातावरण रखें ताकि उसका अपनी क्षमता के अनुसार स्वाभाविक विकास हो सके, कुछ वैसे ही जैसे एक पौधे को पर्याप्त हवा, पानी, खाद तथा प्रकाश मिलने से उसका स्वाभाविक विकास अपने–आप होता है। हमें भी वे परिस्थितियां और अनुभव रचने तथा संचित करने हैं जिसकी मदद से वह स्वयं का विकास करने में सक्षम बन पाये।

बच्चों की आदतें

बच्चे जिज्ञासु होते हैं और सीखना चाहते हैं। उनके हाथ में आये खिलौने, सामानों की खोल–खाल, तोड़–फोड़ इसी का परिणाम है। उनकी यही जिज्ञासा उनके सीखने का आधार होती है। इसी जिज्ञासा के चलते उनकी खोज–बीन शुरू होती है जिसका सीखने में महत्वपूर्ण स्थान है। इसलिये बच्चों को स्वतंत्र रूप से काम करने का मौका मिलना चाहिये शिक्षक का काम बच्चों के रास्ते को आसान बनाना है और बच्चों की जिज्ञासा को सीखने की प्रक्रिया में उचित स्थान देना है। क्या हमने कभी ऐसा महसूस किया है ? साथ ही बच्चों का मन कल्पनाशील भी होता है। उन्हें नयी–नयी बातें रचना अच्छा लगता है। बच्चों की कल्पनायें हमें भले ही निरर्थक लगें (जैसे बच्चे कविता गाते–सुनते हुये अपनी तुकबंदी जोड़ देते हैं या चाँद–तारों के बारे में मनगढ़ंत बातें किया करते हैं।) लेकिन सच्चाई तो यह है कि **"बचपन की कल्पना में ही सृजनशीलता और स्वतंत्र चिंतन की क्षमता छिपी रहती है।"**

पते की बात यह भी है कि हम जो कुछ भी जिस तरह से करते हैं, बच्चे उसे संदेश के रूप में ग्रहण करते हैं। हम उन छोटी–छोटी बातों के प्रति बेखबर रहते हैं और वे सीखते रहते हैं। पता तो तब चलता है "जब हम उन्हें वैसा करते देखकर अचानक अचंभित/चिंतित अथवा कभी–कभी क्रोधित हो उठते हैं।" क्या आपने भी ऐसा कभी देखा है ? बच्चे अनुकरण करते हैं इसका उपयोग भाषा सीखने में होता है।

बच्चों को जो अच्छा लगता है

बच्चों को क्या–क्या अच्छा लगता है ? यह समझ हमारे काम को आसान बना सकती है। बच्चों को विविधता अच्छी लगती है। जिन कार्यों में उनकी रूचि अधिक होती है उनसे उनका ध्यान हटाना मुश्किल होता है। कुछ उदाहरण आप सुझायें !

बच्चों की इसी खूबी को पहचान कर हमें अपने काम को आसान करने की जरूरत है। बच्चों को तरह–तरह की चीजों से खेलना, अच्छा लगता है और वे उससे बहुत कुछ सीखते हैं। आपकी क्या राय है ?

बच्चों की अभिरुचि, कौतूहल, आकर्षण व उत्सुकता पर ध्यान दिया जाना चाहिये। उनके अनुभव करने के ढंग को सीखने के तरीकों से जोड़ने की आवश्यकता है। इस तरह बच्चों के स्वाभाविक विकास में मदद की जा सकती है।

कैसे सीखते हैं, बच्चे ?

बच्चे कैसे सीखते हैं ? सीखने की प्रक्रिया लगातार चलती रहती है किंतु सीखने की दृष्टि से बच्चे की उम्र महत्वपूर्ण होती है। **शुरुआत के आठ सालों में बच्चे जो ग्रहण करते हैं वह बहुत महत्वपूर्ण होता है।** इस बारे में आप क्या कहना चाहेंगे ? इन शुरूआती अनुभवों का बच्चों के व्यक्तित्व एवं कार्यों पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

एक बच्चे में सीखने की असीमित क्षमता होती है। इसलिये बच्चों को स्वतंत्र रूप से कार्य करने का पर्याप्त अवसर मिलना चाहिये। उनकी जिज्ञासा और खोजबीन करने की आदत को सीखने की प्रक्रिया में उपयोग किया जा सकता है।

हम यह भी जानते हैं कि बच्चे अनुकरण के अलावा स्वयं करके भी सीखते हैं। अपने द्वारा किये गये कार्यों एवं उनके प्रभावों के संबंध को ढूंढ़ सकते हैं। अनुभव करके सीखी हुयी बातें अधिक स्थायी होती हैं। **सीखने में गलतियां तो होंगी ही क्योंकि "गलतियाँ सीखने की सीढ़ियां हैं।"**

> आज सुबह स्कूल जाने से पहले मैंने अपने नये स्कूल की एक शिक्षिका से मुलाकात की। १० बजे से कुछ पहले मैं स्कूल पहुँच गया। प्रार्थना, जो जूनियर और प्राइमरी की सम्मिलित होती थी उसमें शिक्षक शिक्षिकाओं के बीच मैं खड़ा हो गया। बच्चों के चेहरों पर जिज्ञासा थी लेकिन उन्हें प्रार्थना के कारण अपना सिर झुकाये रखना पड़ रहा था या आँखें बंद रखनी पड़ रही थीं। बीच–बीच में शिक्षिकाओं की घुड़कियाँ उनके कानों में टकराती और फिर वे बबुए की तरह तन जाते। वरना वे इस नये मास्टर का तुरन्त जायजा लेते ! फिर भी, प्राइमरी की एक लाइन के बच्चों ने सीमाएं तोड़ीं। उन्होंने एक आँख प्रार्थना के सम्मान में बंद रखीं और दूसरी

> आँख खोलकर मेरी नापतौल की। कक्षा ५ में बच्चे चित्र बना रहे थे। श्यामपट्ट पर केले और पतंग के चित्र बना दिये गये थे जिनकी नकल बच्चे कर रहे थे। इसी बीच कक्षा में शिकायतें उभरी कि "इसकी पतंग ठीक नहीं बनी" या कि "इसका केला गलत हैं।" सबकी पतंग और सबके केले एक जैसे कैसे हो सकते हैं भला? और होना भी नहीं चाहिये। सृजनात्मकता वैयक्तिक ही होती है।
>
> ***एक प्राथमिक शिक्षक का स्कूल में पहला दिन भीमताल, नैनीताल***

बच्चों को सीखने के अवसर देने पड़ेंगे। बच्चों के सीखने की क्षमता का अंदाजा हमें उनके उन कार्यों से लगता है जिनमें उनकी रूचि होती है। हम बहुत बार पाते हैं कि रुचि वाले खेलों में उन्हें भूख–प्यास तक की चिन्ता नहीं रहती। कुछ सिखाने के पहले यही रूचि पैदा करना जरूरी होगा।

बच्चे अकेले तथा समूह में सीखते हुये एक दूसरे का मूल्यांकन भी करते रहते हैं। क्या कक्षा–शिक्षण में भी खुद मूल्यांकन करने के मौके दिये जा सकते हैं ?

बच्चों के दृष्टिकोण को समझना जरूरी

बच्चों को स्वयं करके सीखने के अधिक से अधिक अवसर न देने के पीछे हमारी धारणा यह होती है कि वे शरारत करेंगे। असल में हम बच्चों की शरारतों को केवल नकारात्मक नजरिये से देखते हैं और उनको अपनी अपेक्षाओं के अनुरूप ढालना चाहते हैं। वास्तव में बच्चे हर बार शरारत नहीं कर रहे होते हैं, बल्कि कुछ करके देखने, समझने और कुछ खोजने के उत्साह से भरे होते हैं। उनके इसी उत्साह को दिशा देने की जरूरत है।

यह सच है कि बच्चों की अपनी दुनिया होती है और हमें उनकी दुनिया में उतर कर उनको देखना, समझना होगा। अब हम बड़ी आसानी से सोच सकते हैं कि क्या हमारी अपेक्षा यह होनी चाहिये कि **बच्चे अपने आपको स्कूल की जरूरत के अनुरूप ढालें, या स्कूल अपने आपको बच्चों की जरूरत के अनुसार ढालें ?** इसका जवाब उतना जरूरी नहीं है जितना इनमें से सही विकल्प को चुनना। चुनने का अधिकार आपको है।

क्या आप जानते है ? – कक्षा शिक्षण करते समय शिक्षक का लक्ष्य क्या है ?

- जानकारी देना
- अवधारणा का विकास करना
- पहचान की क्षमता
- प्रत्यास्मरण / पुनःस्मरण की क्षमता
- वर्गीकरण करना
- तुलना करना
- निरीक्षण करने की क्षमता
- छाँटना
- अशुद्धियाँ / कमियाँ बताना
- त्वरित गति से सही उत्तर देना
- कौशल विकास (पढ़ने / लिखने / बोलने)
- मनोवृत्ति / अभिवृत्ति में परिवर्तन

सीखने की प्रक्रिया

बच्चों के बारे में हमारी एक समझ बनी है। सीखना बच्चों की स्वाभाविक क्रिया है। रुचियाँ एवं रवैया भी सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। हमने यह भी माना है कि यदि बच्चे को सीखने का अवसर दिया जाये तो वह अपनी रुचि, अनुभव और स्तर की बातों को सीख सकता है। बच्चों की सीखने की गति, क्षमताओं एवं रुचियों में भी विविधता होती हैं, इसलिए सीखने के लिए अवधि निश्चित कर पाना कठिन है।

बाकी कार्यों की तरह सीखने–सिखाने की प्रक्रिया भी **"मिलजुल कर"** करने वाली एक क्रिया है ? हम यह पायेंगे कि इस रूप में यह ज्यादा प्रभावी होती है।

हमें और क्या–क्या करना चाहिए जिससे इस प्रक्रिया को नयी दिशा मिल सके ? आइए अब कुछ और पहलुओं पर गौर करें।

आम तौर पर सीखने की प्रक्रिया बच्चों और बड़ों में एक जैसी होती है। पहले हम चीजों को मोटे (स्थूल) रूप में देखते/ग्रहण करते हैं। उन्हें उलटते–पलटते, उनसे खेलते और उन्हें इस्तेमाल करते हुए उनके बारे में ढेर सारी बातें जान जाते हैं। मसलन उनका प्रचलित नाम, उनका इस्तेमाल, उनकी बाहरी और भीतरी बनावट तथा उनके दूसरी चीजों से रिश्तों की बाबत। इस वक्त तक हमारे पास उन चीजों के बारे में कई धारणाएं होती हैं।

सीखने की प्रक्रिया, वस्तुओं के बार–बार इस्तेमाल के साथ क्रमशः आगे बढ़ती है। वस्तुओं के बारे में बनी हमारी धारणाएं पुष्ट होती हैं। तब हम चीजों की प्रवृत्तियों और कार्य–कारण सम्बन्धों को कुछ–कुछ जानने लगते हैं। इसके साथ ही उनके बारे में हमारी कुछ खास धारणाएं बन जाती हैं। स्कूल में 'इन्द्रिय संवेदन' से 'निष्कर्ष' तक की इस यात्रा का कुछ इस तरह व्यक्त कर सकते हैं।

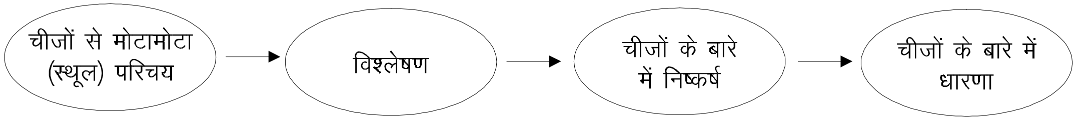

अभ्यास और रटने में फर्क

शिक्षक के रूप में हमें अपने से यह सवाल निरंतर करते रहना चाहिये – क्या हम बच्चों को उनकी रुचि और क्षमता के अनुसार कार्य करने दे रहे हैं ? जो कार्य हम उनसे करा रहे हैं, क्या वह वास्तव में अभ्यास के रूप में है ? आप क्या सोचते हैं इस विषय में ? कहीं ऐसा तो नहीं कि हम जो कुछ बच्चे से कराना चाह रहे थे, उसके बदले कुछ और होता जा रहा है ? कहीं हम रटाने का ही अभ्यास तो नहीं करा रहे हैं ? और इसी को अभ्यास मान बैठे हैं ?

सोचें और बतायें। पहाड़ा याद करना अभ्यास है या रटना ? **"अभ्यास" में किसी क्रिया को सक्रियता, समझ और तर्क के साथ करने की गुंजाइश होती है। इसमें नवीनता और सृजनशीलता की संभावना निहित रहती है। इसके विपरीत रटने की क्रिया मशीनी ढंग से की जाती है।** इसमें बात को दुहराने की क्रिया की जाती है और मस्तिष्क कम सक्रिय होता है, जिसके

कारण सीखने की क्रिया लगभग नहीं के बराबर होती है।

सोचकर बतायें – बच्चे को भाषा का एक पैराग्राफ बोलकर लिखवाना और देखकर लिखने को कहना, इन दो गतिविधियों में कब "अभ्यास" कार्य होगा ?

हमारी कक्षा में ऐसे कौन–कौन से मौके हो सकते हैं जिनमें 'अभ्यास' को अधिक अवसर मिले?

याददाश्त के मौके

बच्चों में सीखने की इच्छा पैदा करना तथा उसे बढ़ाना बहुत जरूरी है। यह सीखने की मानसिक तैयारी जैसा कार्य है। यह पता लगाना भी बहुत जरूरी है कि हम बच्चों में सीखने की इच्छा कैसे विकसित करें ?

क्या हम यह चाहते हैं कि बच्चे को सदैव नयी–नयी बातें बतायी जानी चाहिये, उनकी रुचि और जिज्ञासा को बनाये रखने के लिए ? इस विषय में हम अपने कक्षा – शिक्षण पर विचार करें।

इस पर विचार करने से बहुत मदद मिलती है कि जो बातें हम बच्चे को बता रहे हैं, उनका उसके जीवन में क्या उपयोग है ? और उनके उपयोग के लिए कितने अवसर उपलब्ध हैं ?

आज जो तथ्यात्मक जानकारी हम बच्चे को दे रहे हैं, क्या उसे रट लेना ही सीखना है ? वास्तविक सीखना तो उन तथ्यों को अपने तर्कों की कसौटी पर रखकर समझना और परिस्थिति के अनुसार उसका उपयोग करना है। इसलिये यह देखना आवश्यक हो जाता है कि – क्या हमने कभी कोई ऐसी परिस्थिति बनायी, जिसमें बच्चों को बार–बार याद की गयी बातों, तथ्यों के उपयोग करने के मौके मिलें ?

हमने बच्चे को ऐसा 'गोदाम' तो नहीं बना दिया है जिसमें भरा तो बहुत कुछ गया परन्तु जब उसमें से निकालना चाहा तो मिला कुछ नहीं ?

"अवधारणा" की समझ

बच्चे कैसे समझते हैं कोई अवधारणा ? आम धारणा है कि सीखना–सिखाना एक गंभीर प्रक्रिया है, अतः इसे गंभीरता से ही किया जाना चाहिए, लेकिन ध्यान देने योग्य बात यह है कि आनन्ददायी तथा रुचिपूर्ण गतिविधियाँ भी सीखने–सिखाने के लक्ष्य के प्रति पूरी गंभीरता से मददगार होती हैं। गंभीरता लक्ष्य के प्रति होना आवश्यक है न कि वातावरण में। यदि सीखने–सिखाने के बारे में हमारी अवधारणात्मक समझ ही साफ नहीं होगी तो फिर यह क्रिया कितनी प्रभावी होगी ? हम कहाँ तक अपने कार्य को सही दिशा दे पायेंगे ?

जब एक पेड़ बनाने के लिए कहा जाता है तो अधिकांश लोग पेड़ एक जैसा नहीं बनाते हैं। जिस पेड़ को अपने क्षेत्र में नजदीक से देखा है उसे ही बनाते है। परन्तु जब आम या किसी अन्य निश्चित पेड़ को बनाने के लिये कहा जाता है तब अधिकांश लोगों के चित्र लगभग एक से होते हैं। ऐसा क्यों हुआ ? यह उनकी किसी पेड़ विशेष की अवधारणात्मक समझ के कारण ही हुआ।

आइए ! अब हम गणित की एक अवधारणा को लेकर बात करते हैं। जोड़ गणित की एक

संक्रिया है जिसमें दो या अधिक चीजों को एक में मिलाकर बढ़ाने की अवधारणा निहित है। अब इसे हम बच्चे के सामने जैसे भी रखें – वस्तु, कंकड़, फल, पशु, पक्षी के उदाहरण से, प्रत्येक दशा में संख्या बढ़नी ही है। यदि यह अवधारणात्मक समझ विकसित हो गयी तो समस्या चाहे जिस रूप में रखी जाय बच्चे के लिए उसे हल करना मुश्किल न होगा।

इस स्थिति में बच्चों के सीखने की जाँच परख हम इबारती प्रश्नों के माध्यम से कर सकते हैं। क्या आप बच्चों को जोड़ की परिभाषा पहले बताना चाहेंगे ? अथवा उन्हें उस प्रक्रिया से गुजरने का मौका देंगे ?

हमारे सामने प्रश्न यह है कि बच्चे किन तरीकों से बेहतर सीख सकेंगे ? किसी अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए यह बहुत जरूरी है कि प्रासंगिक अनुभव की उपयुक्त स्थितियों का निर्माण किया जाये। "पाठ्य–पुस्तक" तथा "अनुभव स्थितियों" का निर्माण, एक दूसरे के पूरक हैं।

> बच्चे पढ़ रहे हैं कभी
> 'क' से कलम कभी 'क' से कबूतर, 'ह' से हल
> चीजों वस्तुओं की इस दुनिया में
> नहीं सिखायी जातीं उन्हें क्रियायें।

सीखने की क्षमतायें/शैलियां (गतियाँ)

जो बच्चे अपने को परिवेश के अनुकूल ढाल लेते हैं, ज्यादा जल्दी सीख पाते हैं। जबकि कुछ बच्चे धीरे–धीरे सीखते हैं। हमें इससे चिन्तित होने की बहुत आवश्यकता नहीं है क्योंकि सीखने की गति व शैली प्रत्येक बच्चे के लिये भिन्न होती है। बच्चों में कौशल, जानकारी, अवधारणाओं और अभिवृत्तियों के क्षेत्र अलग–अलग होते हैं। अतः उन्हीं के अनुरूप क्षमताएं विकसित करने में सहयोगी बनना उपयुक्त होगा।

घर की भाषा और स्कूली भाषा

स्कूल आने से पहले बच्चे अपनी भाषा में बातचीत, अपने भावों को व्यक्त कर लेते हैं। अपनी बात कहने में उन्हें कोई समस्या नहीं होती। लेकिन यही बच्चे जब स्कूल में आते हैं तो वे अक्सर चुप रहते हैं, बोलने में संकोच करते हैं। कुछ पूछने पर बता नहीं पाते। आखिर ऐसा क्यों ? हम अक्सर उनकी भाषा पर ध्यान न देते हुए उनको स्कूली भाषा में सुनना चाहते हैं। यह कार्य बच्चे के भाषा सीखने में रुकावट पैदा कर सकता है। हम उनसे यह उम्मीद करते हैं कि वे विद्यालय आते ही तुरन्त मानक भाषा में बात करने लगें। क्या बच्चों से यह अपेक्षा है ? जैसे– क्षेत्र के अनुसार बच्चे हिरण को हिरन कहते हैं। तो क्या हम स्कूल में बच्चों द्वारा हिरन कहने को अशुद्ध मान लें ? उसके बोलने पर रोक लगा दें ? "भाषा सीखने में बातचीत" किसी विषय पर सार्थक बातचीत महत्वपूर्ण होती है। अगर ऐसी परिस्थितियाँ बनायी जायें कि बच्चे ज्यादा से ज्यादा बातीचत कर सकें, बोलें तो उन्हें उनके "घर की भाषा" से धीरे–धीरे "स्कूल की भाषा" की ओर मोड़ा जा सकता है।

शिक्षक / शिक्षिका

नज़रिया

क्या हमने कभी सोचा कि बच्चे, उनके माता–पिता और समाज हमारे बारे में क्या सोचते हैं ? समुदाय के लोग हमसे क्या अपेक्षा करते हैं ? स्वयं मनन करें और अपनी स्थिति का आकलन करें।

शायद हम ज्यादातर मामलों में अपने से संतुष्ट नहीं होंगे। यदि हम संतुष्ट हैं तो संभव है हम उनकी कसौटी पर खरे उतर रहे होंगे। उनका स्नेह, विश्वास, सहयोग व आदर भी पा रहे होंगे।

क्या हमने कभी ध्यान दिया कि जब भी हम स्वयं अपने कार्य से संतुष्ट हुए तब बच्चों का लगाव हमारी ओर कैसा रहा ?

यह सच्चाई है कि बहुत सारे शिक्षक पढ़ाना चाहते हैं परन्तु उन्हें प्रोत्साहन नहीं मिलता। वहीं यह भी कड़वा सच है, कि एक गरीब देश के लिहाज से शिक्षकों के वेतनमान काफी अच्छे हैं किन्तु बहुत से शिक्षक सहूलियत/साइड वर्क के रूप में शिक्षण कार्य करते हैं। ऐसी स्थिति में क्या करना होगा कि वे रुचि एवं प्रतिबद्धता के साथ यह कार्य करें।

शिक्षक के कार्य करने की दशायें

अनुभव किया जाता रहा है कि शिक्षक के कार्य को अन्य बहुत से बाहरी कारण प्रभावित करते रहते हैं। वे क्या हैं ?

शिक्षक सब समस्याओं की जड़ नहीं वरन् समस्याओं से घिरा हुआ है। फिर भी कई समस्याओं के हल शिक्षक के पास हैं। शिक्षक अपनी भूमिका को अच्छी तरह निभा पायें, इसके लिये यह आवश्यक है कि हम सभी की भूमिका में भी सार्थक बदलाव हो। आम धारणा शिक्षक के पक्ष में नहीं है फिर भी जब शिक्षक अपनी कठिनाइयाँ बताते हैं तो यह आभास होता है कि वे काम करना चाहते हैं। हमारी स्कूली व्यवस्था में ऐसा कुछ जरूर होना चाहिये जिससे शिक्षक सफलता का लगातार एहसास करते रहें।

शिक्षक का रवैया

एक बच्चे के रूप में आप कक्षा में क्या–क्या करना चाहते थे ? एक शिक्षक के रूप में क्या आप अपने बच्चों को वही सब करने की छूट देते हैं ? शायद आपका उत्तर "नहीं" होगा। क्या आप इसे उचित मानते हैं ? शायद आप इस निष्कर्ष पर पहुंच रहे हों कि बच्चे के भावनात्मक पक्ष को समझे बगैर सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को अच्छी तरह आगे बढ़ाना संभव नहीं है। हमने ऐसा भी महसूस किया होगा कि हमारा व्यवहार कभी–कभी बच्चे के लिये समस्या बन जाता है। हमें विचार करना होगा कि बच्चे के साथ हमारा व्यवहार कैसा हो ? हम कक्षा के अंदर क्या कुछ करें कि बच्चे सहज भाव से सभी क्रियाओं में रुचिपूर्वक भाग लेते हुये आसानी से सीख सकें।

जब स्कूल पहुंचा तो ज्यादातर बच्चे आ चुके थे और खेल रहे थे। कुछ देर उनके खेल देखता रहा। लेकिन जब मैंने बच्चों से, उनके खेल में शामिल होने की इच्छा व्यक्त की तो बच्चों ने ठहाका लगाया, "मास्टरसाब भी खेलेंगे .... !"
"क्यों, मास्साब नहीं खेलते?"
इसका उत्तर मिला "नईं"।
"फिर क्या करते हैं?" मैंनें पूछा।
"मास्साब मारते हैं," और बच्चों ने फिर ठहाका लगाया।

"पुस्तक" और "अनुभव स्थितियों" का निर्माण एक दूसरे के पूरक हैं। "अनुभव स्थितियों" का निर्माण शिक्षिका ही कर सकती है और सुगमकर्ता के रूप में यह शिक्षक का सबसे बड़ा कार्य है। एक शिक्षक को "सुगमकर्ता" होना चाहिये, इस "सुगमकर्ता" की भूमिका में दोस्त और ज्ञानी की भूमिका शामिल है। अतः शिक्षक का काम बच्चों के सीखने के रास्ते को आसान बनाना है।

हम जो कुछ जैसे कर रहे होते हैं बच्चे भी वह सब उसी प्रकार करने का प्रयत्न करने लगते हैं। आपके अनुभव में कब ऐसा कब हुआ, अपनी स्मृति पर जोर दें और लिखें ....

इस दौरान हमने यह भी पाया होगा कि बच्चे क्या करना चाहते हैं ? उन्हें क्या मान्य हैं ? क्या हमने कभी ऐसा अनुभव किया कि जब बच्चे हमारे द्वारा प्रयोग की गयी भाषा नहीं समझते तब उस दशा में हाव–भाव वाली कहानी, कविता, व गतिविधियाँ, सिखाने में हमारी कुछ मदद कर सकती हैं ? बच्चे वस्तुओं से खेलकर बहुत कुछ सीखते हैं, क्या इसका एहसास हमें है ?

परिवेश की विभिन्न वस्तुयें, विभिन्न विषयों को प्रभावी ढंग से सीखने में बच्चों की मदद करती हैं। यदि हम किसी विषय में रुचि रखते हैं और रुचि के साथ पढ़ाते हैं तो बच्चे भी उसे अवश्य रुचिपूर्वक पढ़ते एवं समझते हैं।

बच्चों के विकास के लिये हमें अपने रवैये पर ध्यान देना बहुत जरूरी हैं। हमें उन तरीकों को खोजना होगा जो बच्चों के विकास में सहायक हों। साथ ही साथ बच्चों को मान्य भी हों।हम ऐसी कोई बात या गतिविधि न करें जिससे लड़कियों तथा लड़कों में जाति, धर्म व लिंग के आधार पर गैर – बराबरी का भाव उत्पन्न हो।

क्या आप जानते हैं ?

- ❖ कक्षा में शिक्षण के द्वारा बच्चों में विषयवस्तु की ८०–८५% समझ विकसित हो जानी चाहिए।
- ❖ बच्चे को विषयवस्तु की समझ सीखने के अवसर
- ❖ ग्रह्यता और योग्यता (क्षमता) पर निर्भर करती है। ***प्रथम दो बिन्दु शिक्षक पर आधारित है।***
- ❖ कमजोर और योग्य बच्चों के लिये एक शिक्षक उनकी आवश्यकताओं को देखते हुये विशेष प्रयास करता है।

समय–प्रबन्धन

आमतौर पर शिक्षक कक्षा में जाकर पिछले दिन जहाँ थे, किताब के उस अंश/पृष्ठ/प्रश्नावली के आगे का काम शुरू कर देते हैं – यानि बिना तैयारी के, बिना फीडबैक/मूल्यांकन के आगे पढ़ाना शुरू हो जाता है। बिना इस बात का ख्याल किये करें कि बच्चे क्या चाहते हैं उस समय

हम अपनी मर्जी के अनुसार जब चाहते हैं तो किसी भी कक्षा में कोई भी कार्य/पाठ अनियोजित तरीके से प्रारंभ कर देते हैं। इसके लिये आवश्यक तैयारी तथा उस कार्य के पश्चात मूल्यांकन व फीड बैक से हमारा कोई सरोकार नहीं रहता। क्या यह सच है ? आइए, विचार करते हैं कि नियोजन व समय–प्रबंधन में किन–किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

इन कठिनाइयों के बावजूद क्या हम इस दिशा में कारगर कदम उठा सकते हैं ? यदि हम यह मान लें कि हमारे पास पढ़ाने के लिये एक वर्ष में १५० कार्य दिवस हैं। उसी के अनुसार/सुनियोजित/सुव्यवस्थित ढंग से पढ़ायें तो सार्थक परिणाम निकलेंगे। इस के लिये इस पुस्तिका के अंतिम भाग में "मेरी खुद को पढ़ाने की संदर्शिका" बहुत उपयोगी होगी।

❖ क्या हम कक्षा एवं विषयवार पीरियड तय कर सकते हैं ?
❖ क्या बहुकक्षा (बहुश्रेणी/बहुस्तरीय)/शिक्षण की स्थिति में बच्चों की भी कुछ मदद ली जा सकती है ?
❖ क्या बच्चों की अनियमित उपस्थिति को ध्यान में रखकर दोबारा अभ्यास के अवसर दे सकते हैं ?
❖ क्या विद्यालय की नियमित दिनचर्या के बोझ को बच्चों की भागीदारी से कम कर सकते हैं?

यह वास्तविकता है कि प्रदेश के 95 प्रतिशत से अधिक शिक्षक एक समय में एक से अधिक कक्षायें संभाल रहे हैं, जिसमें हर उम्र/स्तर के बच्चे आते हैं। शिक्षक और छात्र अनुपात भी बहुत अधिक है। साथ ही हर बच्चे के सीखने तथा कार्य करने की गति भी अलग–अलग होती है। ऐसी स्थिति में समय–प्रबन्धन का महत्व और भी बढ़ जाता है। स्कूल में बच्चों का सबसे ज्यादा समय "भाषा" सीखने में बीतना चाहिये। ऐसा क्यों ? दरअसल भाषा ही कुछ भी सिखाने, सीखने, जानने बताने का माध्यम है और इसमें सामर्थ्य आना जरूरी है।

बच्चे दो–दो तीन–तीन के समूहों में विद्यालय आ रहे थे। 9-45 बजे प्रार्थना की घंटी बजी। बच्चे शोर मचाते धक्का–मुक्की करते हुये स्कूल के सामने मैदान में जमा हुये। प्रार्थना और राष्ट्रगान के बाद बच्चों की उपस्थिति दर्ज की गयी। फिर बच्चे अपनी–अपनी कक्षाओं में बैठे। पढ़ाई का कार्य आरंभ हुआ और १० बजकर ३० मिनट हो रहे थे। कक्षा ५ को कक्षाध्यापिका द्वारा आलेख (किताब से नकल कर कापी में लिखने) का निर्देश दिया गया। कक्षा २ के अध्यापक ने श्यामपट्ट पर कुछ वाक्य लिखे और बच्चों को उन्हें अपनी कापी पर उतारने का निर्देश दिया। कक्षा ३ के बच्चे भाषा की किताब के पाठ चार "चिड़ियां" का सस्वर वाचन करने लगे। कक्षा १ को भी अध्यापक ने सुलेख लिखने हेतु कहा।

बच्चों के सवाल–जवाब, रुचि उत्सुकता सहायक सामग्री, गतिविधि और क्रियाकलाप, सीखने–सिखाने के लिये सक्रिय वातावरण : यह सब प्रशिक्षण के दौरान की जाने वाली बातें हैं। मुझे लगा कक्षा की दुनिया में वही होगा जो शिक्षक चाहेंगे।

"दिन की शुरुआत" (एक शिक्षिका की डायरी से, 18-2-98 आशापुर, वाराणसी)

शिक्षण विधि

विचार करके देखें कि हमारा कक्षा–शिक्षण पाठ्यक्रम के लक्ष्यों को प्राप्त करने के बजाय पाठ्य पुस्तक की सामग्री को रटने/हल करने तक सीमित तो नहीं हो गया है ? इसके स्थान पर पाठ्यक्रम के लक्ष्यों को पाने के लिये हमें अपनी शिक्षण विधि में क्या–क्या बदलाव लाना होगा ? शायद हम सहमत होंगे कि इस काम में "गतिविधियां" हमारे काम को आसान बना सकती हैं। नीरस

व बोझिल पाठ्य–सामग्री को भी जीवन के वास्तविक संदर्भों से जोड़कर प्रस्तुत करना प्रभावी हो सकता है। गीत, कहानियां, अभिनय (नाटक), बातचीत, परिभ्रमण, अवलोकन, समूहकार्य हमारी शिक्षण–विधा को रोचक बना सकते हैं।

क्या आप जानते हैं ?

शिक्षक का बच्चों के प्रति स्नेह एंव शिक्षण कार्य के प्रति समर्पण प्रत्यक्ष रूप से बच्चों एवं जन समुदाय पर सकारात्मक प्रभाव डालता है इसके विपरीत, तम्बाकू खाने, शिक्षण के समय अखबार पढ़ने, बुनाई करने आदि कार्यों का अप्रत्यक्ष बुरा प्रभाव पड़ता है।

शिक्षक की अपने बच्चों के बारे में क्या मान्यतायें और विश्वास हैं, यह सिखाने के तरीकों तथा अपने छात्रों से अपेक्षाओं को बहुत ज्यादा प्रभावित करते हैं।

बच्चों में जिज्ञासा पैदा कर हम उनका सीखना आसान कर सकते हैं। उनके अनुभव के आधार पर, रुचियों का ध्यान रखते हुए नवीन जानकारियों एवं अनुभवों को सहज रूप में जोड़ सकते हैं। उन्हें अभिव्यक्ति का पर्याप्त अवसर देकर उनकी कल्पनाशीलता एवं सृजनशीलता को सकारात्मक दिशा दे सकते हैं। तब हम पायेंगे कि हमारा काम आसान होता जा रहा है।

शिक्षक के लिये यह संभव है कि वह पता कर सके कि बच्चे ने गलती क्यों की। शिक्षक को बच्चे एवं समस्या को अलग–अलग करके समझना चाहिये जिससे कि समस्या को चोट पहुंचे, बच्चे को नहीं।

अक्सर हमारा संबंध अपने बच्चों के साथ सुगमकर्ता और दोस्त का नहीं होता है। इसीलिये हम बच्चों के साथ गतिविधियां करने में हिचकते हैं। हमारे समाज का परिवेश भी हमारी इस हिचक को तोड़ने में सहायक नहीं होता है। गतिविधियों के बारे में उपयुक्त समझ न होने के कारण अक्सर हम पाठों को पूरा कराने में लग जाते हैं और गतिविधियों को निरर्थक एवं समय की बरबादी मानते हैं।

जबकि सच्चाई यह है कि गतिविधियों से विभिन्न दक्षताओं का विकास होता है। यह जरूरी है कि करायी गयी गतिविधि उपयुक्त व संतुलित हो। अक्सर बच्चे अपनी गलतियां खुद पकड़ लेते हैं। यह जरूरी नहीं है कि उन्हें हर बार गलतियों का एहसास कराया ही जाय। इस समझ के साथ कि गलती होने पर पहाड़ नहीं टूट पड़ेगा।

सीखने की प्रक्रिया में गलतियाँ तो होंगी ही। लेकिन 'सीखना' बन्द नहीं होना चाहिए।

कक्षा शिक्षण के उद्देश्य → पूर्व व्यवहार अथवा पूर्वज्ञान → शिक्षण प्रक्रिया → निष्पत्ति मूल्यांकन

पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें

हममें से अधिकांश लोगों ने प्राथमिक कक्षाओं के लिये पाठ्यक्रम देखा होगा। लेकिन अक्सर देखा गया है कि पाठ्यक्रम की बात चलने पर हममें से ज्यादातर लोग पाठ्यपुस्तकों का जिक्र करने लगते हैं। पाठ या प्रसंगों को गिनाने लगते हैं। क्या पाठ्यपुस्तकें ही पाठ्यक्रम है ? या वह हमें पाठ्यक्रम के लक्ष्यों तक पहुंचाने का साधन भर हैं ? यदि पुस्तक एक साधन है तो पाठ्यक्रम क्या है ? दोनों के बारे में हमारी धारणायें क्या हैं ? आइये, जरा इन सवालों पर भी सोचें ?

यह कहना कठिन है कि एक ही समय में कुछ बच्चे निश्चित रूप से इतने पाठ सीख ही लेंगे, या इतनी दक्षतायें हासिल कर लेंगे। फिर भी हर कक्षा के लिये साल भर में सीखने–सिखाने के लक्ष्यों/दक्षताओं की एक सूची बनाई जाती है–यह पाठ्यक्रम केवल दक्षताओं की सूची ही नहीं उसमें इन दक्षताओं को पाने के कई तरीके भी सुझाये जाते हैं। एक निर्धारित समय में हम भाषा, गणित या पर्यावरण अध्ययन की कक्षा में कौन सी गतिविधियां चलायें, इनके भी संकेत देता है। इन गतिविधियों के लिये क्या सामग्री ठीक रहेगी वह इस बारे में भी कुछ संकेत कर देता है। हम काम करते हुये अक्सर पाठ्यक्रम व पाठ्यपुस्तक का फर्क भूल जाते हैं। पाठ्यक्रम में बताये गये लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये कोर्स की किताब से अलग साधन भी अपनाए जा सकते हैं। किताबों में कैद होकर हम उन्हीं को दुहराते रहते हैं। "पवित्र पुस्तक" की तरह उनकी पंक्तियों का जाप करते हुये हम कक्षा को एक नीरस, बोझिल और उबाऊ जगह बना डालते हैं।

इस खतरे से बचने के लिये जरूरी है कि हम दोनों की भूमिका को ठीक–ठीक समझें। मिसाल के लिये कक्षा दो की गणित की पुस्तक में जोड़/घटाने की दक्षतायें तय हैं, कक्षा दो की गणित पुस्तक में जोड़–घटाने के ढेर सारे अभ्यास हैं। बच्चे उन सारे अभ्यासों को कर लेते हैं। लेकिन यही बच्चे दुकान में सामान खरीदते समय रूपये, पैसे, जोड़–घटा नहीं कर सकते या यह नहीं समझ पाते कि किस मौके पर जोड़ना और कब घटाना ठीक रहेगा। तब मानना होगा कि हम पाठ्यक्रम में निर्धारित लक्ष्य "बच्चों में जोड़ने घटाने की दक्षता का विकास" नहीं पा सके।

ऐसे में हमें पुस्तक के घेरे से बाहर निकल कर कोई नया साधन आजमाना होगा। ऐसी सामग्रियां व गतिविधियाँ अपनानी होंगी जिनसे बच्चे जोड़–घटाने के मौकों, उनके व्यवहार और उनकी जरूरतों को समझ सकें।

पुस्तकों के बारे में रूढ़िवादी नजरिया रखना भी ठीक नहीं। एक ही पाठ्यपुस्तक अलग–अलग जगहों पर अलग–अलग तरीकों से इस्तेमाल की जा सकती है। उसके कठिन प्रसंगों को जबरदस्ती बच्चों के दिमाग में ठूंसने से बेहतर होगा कि हम उनकी जगह कुछ वैकल्पिक पाठ या प्रसंग बना लें जो बच्चों के लिये मजेदार व आसान हों। ऐसे प्रसंग/पाठ कुछ सहायक पुस्तकें जो बी० आर० सी / एन० पी० आर० सी० या स्कूल के पुस्तकालयों में पड़ी हैं, उनसे ढूँढ़े जा सकते हैं या स्वतः सोचे जा सकते हैं। यह सब तभी हो सकेगा जब हमें पाठ्यपुस्तक के साथ अपनी कक्षा व विषय के पाठ्यक्रम की भी जानकारी हो। यदि पाठ्यक्रम उपलब्ध न हो तो अपने "संकुल" या "ब्लाक संसाधन केन्द्र" से उसकी मांग करें।

गतिविधि क्या है ?

आइये कुछ क्रिया करते हैं

अपने चारों ओर गौर से देखें, कितने आयत हैं ? दस, पचास, सौ या इससे ज्यादा ? (अनुमान की पुष्टि करने का प्रयास करें) क्या आप आयतों की सही संख्या के निकट पहुँच सके ? आपका उत्तर शायद नकारात्मक है। क्या आपको अपनी कोशिश अपूर्ण लगी ? या आपने अपनी खोजी प्रवृत्ति में अधिक पैनेपन की जरूरत समझी ?

चलिए अब एक और क्रिया करते हैं। एक फूल/पशु/शहर/नदी में से किसी एक का नाम अलग–अलग लेते हुये दोनों पैर जोड़कर आगे कूदते जाइये, कितनी बार कूद सके ? क्या ऐसा नहीं लगा कि आप जितनी ज्यादा बार कूद पाते हैं, उतना ही खुश होते हैं ?

इन दोनों क्रिया–कलापों की तुलना करें। पहली क्रिया मानसिक है जबकि दूसरी मानसिक एवं शारीरिक दोनों। विचार कीजिये ये दोनों क्रियाकलाप आपको कैसे लगे ? क्या आप ऊब गये ? या आपको यह समय की बर्बादी लगी ? अगर आप इन क्रियाओं को करते समय खुश रहे तो क्यों ? .... आपको इन क्रियाओं से कैसा अनुभव हुआ। सोचिये, क्या इन क्रियाओं की कक्षा शिक्षण के लिये कुछ उपयोगिता है ? क्या इन क्रियाओं को कुछ नाम दिया जा सकता है ? यह क्रियायें सभी की सहभागिता, रूचि, उद्देश्य, मनोरंजन, उत्साह और करेंट का पैकेट हैं। इन्हें क्या नाम दें – खेल, अभ्यास या गतिविधि ? जी हाँ यह गतिविधि है। आप स्वयं भी अपनी परिभाषा बना सकते हैं (पाँच मिनट में लिपिबद्ध करें)।

किसमें ज्यादा मजा?

पहले मैंने उन्हें खरगोश –कछुए वाली कहानी सुनाई। फिर चार्ट पर बने इसके कई चित्रों पर बातचीत कराई। फिर कराया उनसे खरगोश–कछुए का अभिनय। एक बच्चा–खरगोश बना, दूसरा कछुआ। बाकी देखते रहे। बच्चों ने बाकायदा कहानी के मुताबिक दौड़कर अभिनय किया।

मैनें बाद में सवाल किया, इन तीनों कामों में से किसमें ज्यादा मजा आया? बच्चों का जवाब था, "दौड़ में?"

(कक्षा १ के एक शिक्षक के अनुभव, गोरखपुर)

अब वर्तमान शिक्षण पद्धति पर जरा विचार करें। शिक्षा पुस्तक केंद्रित बनकर रह गयी है। शिक्षक पुस्तक को ही साध्य मान अपना पूरा समय पुस्तक को रटाने में ही लगा देते हैं। बच्चों को स्वयं कक्षा में करने एवं सीखने के अवसर ही नहीं है। शायद उसी का नतीजा है – शिक्षा की गुणवत्ता में लगातार गिरावट, बच्चों का कक्षा से भागना। सोचें, क्या इन परिस्थितियों में बच्चों के लिये कक्षा में ऐसा कुछ करने की आवश्यकता है जिससे कक्षा का वातावरण जीवन्त, सरल, सहज व रुचिपरक हो। बच्चे स्वयं समस्याओं से जूझ रहे हों समाधान खोज रहे हों वह भी बिना थके, बिना ऊबे। आप शायद कुछ सोच रहे हैं ? मुझे मालूम है आप भी पुरानी व्यवस्थाओं से ऊब चुके हैं और कुछ नया करने का मन बना रहे हैं। हां, इसमें आपको मेहनत भी कम करनी पड़ेगी और अपनी क्षमताओं के प्रदर्शन का भी पूरा मौका मिलेगा। और बच्चे ? वह तो खुशी–खुशी कुछ सीख रहे होगें और कह रहे होंगे – "गुरूजी बहुत मजा आया।"

गतिविधि के प्रकार

आप गतिविधि के महत्व और उसकी ऊर्जा से परिचित हो चुके हैं। आइये अब देखते हें कि गतिविधियां कितने प्रकार की हो सकती हैं। कुछ गतिविधियां शरीर को और कुछ मस्तिष्क को जगाती हैं। कुछ ऐसी भी हैं जो दोनों काम एक साथ करती हैं। शर्त यही है कि गतिविधि के दौरान रोचकता का पुट बना रहे और सीखने की क्रिया सहज रूप से चलती रहे।

"इस प्रकार गतिविधियों के तीन प्रकार हुए –पहली शारीरिक, दूसरी मानसिक और तीसरी शारीरिक + मानसिक दोनो। इन गतिविधियों को हम कक्षा के भीतर भी करा सकते हैं, कक्षा के बाहर भी। मौखिक भी करा सकते हैं लिखित भी। सामूहिक भी करा सकते हैं एकल भी। सामग्री के द्वारा भी करा सकते हैं और सामग्री के बिना भी। और इन्हें कराने के लिए कोई भी तरीका अपना सकते हैं। अभिनय, हाव–भाव, कहानी, कविता, गीत, संस्मरण, परिभ्रमण, वस्तु एकत्रीकरण और जो आप नया सोच सकें। यदि आप बच्चों की मनोवृत्ति को आत्मसात करके कुछ रचनात्मक करना चाहें तो आप अनगिनत गतिविधियों का सृजन कर सकते हैं। आपका यह प्रयास बच्चों के सीखने की क्रिया को सरल, सहज व तनाव–रहित बना देगा। बने भी क्यों नहीं, जब एक गतिविधि आधारित कक्षा जिसमें आप जैसा कल्पनाशील शिक्षक हो, तो गतिविधियों की कोई कमी रह ही नहीं सकती।

गतिविधि कैसे करें ? बनायें ?

हम सबको अन्ततः यह प्रश्न निरंतर उद्वेलित करता है कि हम गतिविधि कैसे करें। क्योंकि कुछ लोगों में किसी भी बात को अभिनय या हाव–भाव से कहने की कला जन्मजात होती है जबकि कुछ लोग प्रशिक्षण से इसे और ज्यादा निखार लेते हैं।

गतिविधि कराने में सबसे महत्वपूर्ण तथ्य है कि हमें आत्मविश्वास हो कि हम ये कार्य कर सकते हैं। विषय की स्पष्ट समझ होना जरूरी है तभी हम कोई गतिविधि विषय से जोड़ते हुए करा सकते हैं। कोई गतिविधि आयोजित करने से पहले गतिविधि के दौरान बैठक व्यवस्था क्या रहेगी, क्या निर्देश देने हैं, कितने समूह बनाने हैं, क्या सामग्री रहेगी, वितरण कैसे होगा, समूह की क्या जिम्मेदारियां रहेंगीं, इन बातों पर निर्णय कर लेना होगा। गतिविधि में सीखने का क्रम, कहाँ शुरू करना, कहाँ विषय को समेटना, तथ्य का स्पष्ट सम्प्रेषण, सामग्री की उपलब्धता, प्रयोग और विभिन्न विषयों को जोड़ने की कला ही सीखने–सिखाने का आधार बन जाती है। गतिविधि में क्या सिखाना है यह पहले तय करके गतिविधि का निर्माण किया जा सकता है और गतिविधि का पहले निर्माण करके भी सीखने के बहुत से तत्व निकाले जा सकते हैं। गतिविधि को रोचकता से जोड़ना उसके प्रभाव को बढ़ा देता है लेकिन हाँ ! रोचकता अनायास आनी चाहिए, प्रयासपूर्वक नहीं।

गतिविधियों से बच्चे स्वाभाविक रूप में सीखते हैं। इन्हें सिर्फ "खेलने के वादन" तक सीमित न करें बल्कि पाठ्‌य–पुस्तकों/पाठ्‌यवस्तु पर आधारित करते हुये गतिविधियों द्वारा बच्चों के सीखने का अवसर दें।

गतिविधि के प्रमुख पहलू

हर गतिविधि में पहले से स्पष्ट हों – गतिविधि का नाम, उद्देश्य, प्रक्रिया, चर्चा बिंदु और सावधानी। लेकिन एक बात यहाँ महत्वपूर्ण है कि हमारे लक्ष्य (उद्देश्य) और बच्चे के लक्ष्य में अंतर हो सकता है इसलिए इतना खुलापन गतिविधि में अवश्य रहे कि हम कोई बंधन वहां पर तय न करें।

गतिविधि में लचीलापन हो, जिससे हम उसे अपनी जरूरतों के अनुसार ढालकर बहु–विकल्पीय बना सकें। कोई पकापकाया (अंतिम सत्य) निष्कर्ष न हो।

गतिविधि एक ढाँचे के रूप में हो तो ज्यादा बेहतर है जिससे विभिन्न विषयों का सहज एकीकरण संभव हो सके।

अनेक दक्षतायें एक ही गतिविधि द्वारा प्राप्त की जा सकती है और एक ही दक्षता को प्राप्त करने के लिए अनेक गतिविधियों का प्रयोग भी किया जा सकता है।

गतिविधि में "करेंट", "सस्पेंस" और सहजता इसे अधिक प्रभावी बनाने के सामान्य सूत्र हैं। एक बात गतिविधि के संदर्भ में बहुत ध्यान रखने योग्य है कि गतिविधि का मतलब केवल शारीरिक भाग दौड़ ही नहीं अपितु मानसिक हलचल भी है।

संभावित कठिनाइयाँ

कभी–कभी गतिविधि निर्माण और उसकी प्रस्तुति के समय कुछ गड़बड़ होने की गुंजाइश रहती है। यदि ऐसी स्थिति आ जाये तो हमें एकदम असहाय या परास्त सा नहीं दिखना चाहिए, अपितु विविध विकल्प अपने पास रखने चाहिए।

कोई भी पूर्णतः सर्वज्ञ नहीं होता। अतः गतिविधि में गतिरोध/ अवरोध उत्पन्न होने की दशा में सोचें कि कारण क्या रहे ? सामान्यतः यह देखा गया है कि गतिविधि के प्रभाव को लेकर हम अनावश्यक तनाव में आ जाते है। गतिविधि के प्रभावी न होने के विविध कारण हो सकते हैं यथा– निर्देशों का स्पष्ट न होना, उचित संप्रेषण न होना, पर्याप्त अभिप्रेरणात्मक तत्वों का न होना, सामग्री की अनुपलब्धता, समूह की सही बैठक व्यवस्था न होना, समूह में जिम्मेदारियों का सही वितरण न होना और विषय को प्रारंभ व समाप्त करने के क्रम में गड़बड़ आदि................।

इन अवरोधों पर विचार करते हुए इन स्थितियों से निबटने के तरीके ढूंढते रहिये। स्वयं पर व अपने बच्चों की क्षमताओं पर विश्वास रखिये, आप निश्चित तौर पर सफल होंगे।

गतिविधि आधारित कक्षा क्या ?

दो मिनट के लिए अपनी आँखें बन्द कीजिए। कल्पना कीजिए एक सामान्य कक्षा और गतिविधि आधारित कक्षा में क्या फर्क है ? आपके क्या विचार हैं ? (नोट करें)

एक परम्परागत कक्षा वह होती है जिसमें बच्चे चुपचाप, बेमन से, जम्हाई लेते हुए, ऊबते हुए बैठे हों, निष्क्रिय श्रोता हों, अनुशासित होने का ढोंग कर रहे हों। इसके विपरीत जहां बच्चे खुश हों,

भयरहित हों, शिक्षक सुगमकर्ता/सहायक की भूमिका में हो, बच्चे प्रश्न पूछ रहे हों, समस्याओं से जूझकर समाधान खोज रहे हों, सामग्री का प्रयोग एवं निर्माण समुचित ढंग से हो रहा हो, गतिविधियों के द्वारा मूल्यांकन की प्रक्रिया निरन्तरता में चल रही हो और बहुकक्षा शिक्षण की स्थितियों में बच्चे स्वयं कक्षा संचालित कर रहे हों, वह गतिविधि आधारित कक्षा होती है।

गतिविधि आधारित कक्षा में बच्चे और शिक्षक के सम्बन्ध जहां आत्मीय होते हैं वहीं सीखने की क्रिया अधिक रुचिपूर्ण और स्थाई होती है।

अनुशासन खराब है !

वे एक स्कूल का मुआयना करने गये थे। स्कूल में अध्यापक बच्चों के साथ टाट पर बैठे थे, वहीं जहाँ बच्चे एक 'गतिविधि' करने में तल्लीन थे। उन्हें यह बड़ा अटपटा लगा। उन्होंने डाँटकर शिक्षक से कहा "यह कुर्सी किसके लिये है। इस पर क्यों नहीं बैठते?"

बच्चे कक्षा में समूहों में बैठकर काम कर रहे थे। आपस में बातचीत करके कुछ लिख रहे थे। कभी–कभी एक दो बच्चे एक समूह से उठकर दूसरे समूह तक चले जाते थे और फिर लौट आते। उन्होंने शिक्षक से कहा – "यह क्या हो रहा है आपकी कक्षा में, इन सब को लाइन से बिठाइये।"

शिक्षक ने उन्हें, मिल–जुल कर सहभागिता के आधार पर सीखने की बात समझाई। पर उनका कहना था "अनुशासन तो अनुशासन है। लाइन में नहीं बैठेंगे तो अनुशासन कैसे स्थापित होगा ?", और उन्होंने स्कूल की निरीक्षण आख्या में लिखा – "स्कूल का अनुशासन काफी खराब है।"

कक्षा की दुनिया में सार्थक बदलाव लाने के लिए शिक्षकों के साथ–साथ शिक्षा–व्यवस्था से जुड़े सभी लोगों को संवेदनशील बनाना होगा।

(एक शिक्षक का 'मुआयने' का अनुभव)

अपने विचारों को इन विचारों से मिलाइये, शायद आपके भी विचार यही हैं। सोचिए, गतिविधि आधारित कक्षा में आप और क्या होता हुआ देखना चाहेंगे (अपने विचारों को नोट करें) ?

गतिविधि आधारित कक्षा की योजना

गतिविधि और उससे जुड़े तमाम पहलुओं के बारे में आप परिचित हो चुके हैं और गतिविधि के बारे में आपकी एक स्पष्ट समझ भी बन चुकी है।

एक ऐसी कक्षा जिसे हम गतिविधि आधारित कक्षा का नाम दे रहे हैं उसका निर्माण हम कैसे करेंगे ? योजना कैसे बनायेंगे ? कैसी सामग्री का प्रयोग करेंगे? सामग्री विकसित कैसे करेंगे ? शिक्षक और बच्चे के क्या संबंध रहेंगे ? इन सवालों पर विचार करने की जरूरत है। इसके साथ ही तय करें कि आने वाले समय में कक्षा में हम क्या–क्या गतिविधियां करने जा रहे हैं। यह हमारे कार्य को बेहतर बनाने की दिशा में एक ठोस प्रयास होगा।

आपकी सुविधा के लिये एक "गतिविधि बैंक" अलग से दिया जा रहा है। इसका इस्तेमाल कक्षा में, कक्षा के बाहर किया जा सकता है। ये गतिविधियाँ ऐसी हैं कि इन्हें अगर एक ढाँचा मान कर काम किया जाय तो इनमें जरूरत (कक्षा/विषय) के हिसाब से फेरबदल किया जा सकता है।

आपके ही शिक्षक साथियों ने इस "इस गतिविधि बैंक" की सामग्री जुटाई है। यह अन्तिम नहीं है। आपके खजाने में भी कुछ और गतिविधियाँ होंगी, उन्हें भी इस "गतिविधि बैंक" में शामिल करें तो यह और समृद्ध होगा।

भाषा

दृश्य : प्रशिक्षण हाल में प्रतिभागी/प्रशिक्षक बैठे हैं। वातावरण में पर्याप्त गंभीरता है। प्रशिक्षक अपनी बात शुरू करतें हैं :

"बाल अवस्था में सर्वांगीण, संज्ञानात्मक विकास के लक्ष्य की पूर्ति, शिक्षक सम्मिलन पद्धति माध्यम से क्रियाकरण उत्पन्न कर परिपूर्ण कर सकते हैं।"

प्रतिभागी – "जी, क्या कहा ?" प्रशिक्षक फिर अपनी बात दुहराता है।

प्रतिभागी – "सर, आप हिन्दी में बात नहीं कर सकते ?"

इस पर कक्षा में गहरी चर्चा होती है। क्या आप अनुमान लगा सकते है कि कक्षा में क्या हुआ होगा? अंत में प्रतिभागी कहते हैं – "तो आप कहना चाहते हैं कि बच्चों को पूरी तरह सीखने में मदद करने के लिये शिक्षक को उनका भागीदार बनना चाहिये।" अरे, तो आप यह सीधे–सीधे नहीं कह सकते थे ?

प्रशिक्षण के दौरान घटी यह घटना हमारी भाषा से जुड़ी इस अवधारणा पर आधारित है कि अच्छी भाषा वह है जिसमें रोजमर्रा की बोलचाल से हटकर 'कठिन' व लम्बे शब्द हों। आखिर भाषा क्या है? यह किस रूप में अर्थ व्यक्त करके सार्थक होती है? भाषा शिक्षण के दृष्टिकोण से एक शिक्षक का इस भाषा से क्या वास्ता है? अनगढ़ भाषा बोलने और जानने वाले गाँव के बच्चों के लिये किताब और शिक्षक की मानक भाषा का क्या महत्व है ?

उद्देश्यों को पूरा कर पाने में सक्षम संकेतों, हावभावों व शब्दों का संयोजन ही भाषा है। यह मौखिक या लिखित हो सकती है। भाषा द्वारा विभिन्न अर्थों, मनोभावों तथा विचारों का आदान–प्रदान किया जाता है। इसके जरिये हम दूसरों की कही या लिखी हुई बातों, विचारों या भावों को सुनकर या पढ़कर समझते हैं। भाषा के माध्यम से ही बच्चे दूसरे विषयों की पढ़ाई–लिखाई करते हैं।

बच्चों में भाषा के विकास के साथ–साथ भाषा के प्रति सौन्दर्यबोध भी बढ़ता चलता है। सोचना, समझना, विश्लेषण आदि मानसिक गुण भाषा – विकास के महत्वपूर्ण हिस्से हैं।

शायद आप सहमत होंगे कि भाषा में संदर्भ, स्थान और परिवेश का बहुत महत्व है। भाषा अलग–अलग संदर्भों में अलग–अलग अर्थ प्रकट करती है।

भाषा शिक्षण की वर्तमान दशा

प्राइमरी स्कूलों में पढ़ने वाले अधिकांश बच्चे अपने घर–परिवार में बोली जाने वाली भाषा बोलते हैं। यह भाषा हिन्दी के स्वीकृत मानक से अलग होती है। हमारे प्रदेश में बोली जानेवाली ऐसी भाषाओं में अवधी, ब्रज, भोजपुरी, बुन्देली, कुमाऊँनी, गढ़वाली आदि मुख्य हैं। स्कूलों में शुरुआत से ही बच्चों को मानक भाषा सिखाने पर जोर दिया जाने लगता है जिससे बच्चे भाषा सीखने से कतराते हैं। बच्चे घर पर बोली जाने वाली भाषा के असर के कारण मानक भाषा के प्रयोग में 'अशुद्धियां' करते हैं जैसे– "उसने कही", "हम लोगों ने जाना है" आदि। इस पर उन्हें डांट पड़ती है। जबकि शुरु में ही शुद्धता पर जोर देने से भाषा सीखने में रुकावट खड़ी हो जाती है। शिक्षकों

की बार–बार टोका–टाकी और चुप कराने से बच्चों में घरेलू भाषा के प्रति हीनभावना भी पैदा हो जाती है और वे आत्मविश्वास के साथ खुलकर अपनी बात नहीं कह पाते।

कक्षा में सार्थक/अर्थपूर्ण बातचीत के पर्याप्त अवसर नहीं उपलब्ध हैं। इस तरह का दबाव या अनुशासन रहता है कि बच्चे चुपचाप कार्य करें।

भाषा सिखाने में मौखिक पक्ष की अक्सर उपेक्षा की जाती है। इससे बच्चे आगे की कक्षाओं में अपनी बात कहने में हिचकते हैं। इससे मौखिक अभिव्यक्ति जैसे सशक्त माध्यम का प्रयोग और विकास नहीं हो पाता। जबकि यह भाषा शिक्षण का जरूरी पहलू है।

भाषा सीखने से पहले उस अवधि की 'सहायक तैयारियों' पर तो ध्यान दिया ही नहीं जाता।

भाषा सीखने–सिखाने के प्रचलित तौर–तरीके बहुत उबाऊ, नीरस और मशीनी किस्म के हैं। बच्चों को इनमें मजा नहीं आता। इसके अलावा कक्षा में कुछ ही बच्चों को बार–बार बोलने का मौका दिया जाता है जिससे ज्यादातर बच्चे भाषा सीखने में पिछड़ते चले जाते हैं।

कक्षाओं में भाषा सीखने में उपयोगी तथा रोचक तरीकों और उसे आसान बनाने के लिये सहायक सामग्री का प्रयोग नहीं के बराबर होता है। बच्चों को समूह में या आपस में या सहपाठियों के साथ बातचीत और सीखने के अवसर नहीं दिये जाते। हाँ, इस '**गलती**' पर उन्हें डांट जरूर मिलती है।

भाषा शिक्षण में अब तक परम्परागत वर्णमाला–विधि का प्रयोग होता है और रटने–रटाने पर जोर दिया जाता है।

भाषा सीखने का क्रम

स्कूल से पहले की भाषा

बच्चे अपने घर–परिवेश में हो रही बातों को सुनते रहते हैं तथा उनके साथ हो रहे हाव–भावों को देखते–समझते हैं। शुरु में बच्चे संकेतों के आधार पर बात को पकड़ने का प्रयास करते हैं। स्वयं भी वे हाव–भावों एवं संकेतों का माध्यम के रूप में प्रयोग करते हैं। धीरे–धीरे वे कहने की कोशिशों और उनके परिणामों को जानने लगते हैं। फिर वे अपने आस–पास तैर रहे शब्दों को पकड़ना शुरु कर देते हैं। शब्द गूंजते समय वे उस दौरान आस–पास हो रहे व्यवहारों को भी देखते हैं। एक दौर ऐसा आता है जब वे सुनना–समझना तेज कर देते हैं। इस प्रकार वे सुनकर, समझने की ओर बढ़ते हैं। जब उन्हें यह समझ आती है कि वे शब्दों को बोलकर कुछ हासिल कर सकते हैं तो वे उनका उपयोग करने लगते हैं। क्रमशः उनका काम चलाऊ शब्दभंडार बढ़ता जाता है। बच्चे अपने कथनों और उनके प्रभाव से अपनी भाषा विकसित करते हैं।

स्कूल आने से पहले बच्चे काफी कुछ बोल सकते हैं। ध्यान देने वाली बात यह है कि बच्चा भाषा ऐसे समय संदर्भ से सीखता है, जहां उसका ध्यान भाषा केन्द्रित नहीं है।

शिक्षकोदय प्रशिक्षण के दौरान भाषा सिखाने की चर्चा उठायी गयी थी और '**सुबोपलि**' पर विचार–विमर्श किया गया था। भाषा सीखने में सुनने बोलने, पढ़ने–लिखने का क्रम तो है, लेकिन दरअसल हमेशा ऐसा ही नहीं होता है। क्या जब 'सुनना' होता है तो 'बोलना' रुका रहता है या

'बोलने' के समय 'सुनना' स्थगित रहता है ? यह सब साथ–साथ भी चलता रहता है – सुनना, बोलना, पढ़ना। इससे यह संकेत मिलता है कि भाषा सीखने–सिखाने के लिये कक्षा में ऐसी गतिविधियों का आयोजन किया जाय जिससे एक से अधिक दक्षताएं विकसित की जा सकें।

स्कूल में भाषा

आपकी क्या प्रतिक्रिया है ?

"कक्षा में कुछ ही बच्चे बोलते हैं।" "कक्षा में कुछ बच्चों को ही बोलने का मौका दिया जाता है।" "लड़कियाँ कक्षा में नहीं बोलती।

क्या स्कूल में बच्चों को शुरु में सुनने–बोलने के पर्याप्त अवसर दिये जाते हैं? बच्चा जब विद्यालय में पहली बार आता है तो परम्परागत शिक्षण में शिक्षक उससे सीधे लिखने–पढ़ने का कार्य कराने लगते हैं। वह समझ ही नहीं पाता कि क्यों कुछ आकृतियां जबरन उसे दिखाई, पढ़ाई या लिखाई जा रही हैं। वह घर जैसा वातावरण चाहता है। स्कूल नामक इस जगह पर उसके अपने अनुभवों को सुनने वाला कोई नहीं है, उसकी 'अपनी भाषा' के लिये कोई जगह नहीं होती। अध्यापक के लिये जरूरी है कि पहले वह बच्चे की भाषा को स्वीकार करे, तब उसे अपनी मानक भाषा की ओर ले जाये।

स्कूल में बच्चों को मानक भाषा सुनने, समझने, बोलने के अधिक मौके देना चाहिये। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि बच्चों की घरेलू भाषा को छोटा माना जाय या उपेक्षित किया जाय।

शिक्षकों द्वारा यह क्रम अपनाने से बच्चों को शायद अधिक मजा आयेगा और भाषा सीखने की गति तेज होगी। कक्षा में ऐसे वास्तविक और रोचक संदर्भ बनाये जायें जिनमें तरह–तरह से भाषा का उपयोग करना हो। बच्चों के अनुभव सुनना, उनमें आपस में 'गपशप' करवाना, उन्हें कहानियां–कविताएं सुनाना, कहानियां–कविताएं कहलवाना ऐसी ही गतिविधियां है। इनके जरिये उन्हें मौखिक अभिव्यक्ति के लिये उकसाया जा सकता है।

मौखिक अभिव्यक्ति के साथ उन्हें अभिनय या अंगसंचालन के मौके देना भी जरूरी है। बच्चों के पंसद के विषयों पर छोटे–छोटे भाषण देने के मौके भी मिलने चाहिये। जब उन्हें लगेगा कि विद्यालय भी घर जैसा है, यहाँ बहुत मजेदार बातें सिखाई/कराई जाती हैं, तो हमारा विश्वास है कि वे स्वाभाविक रूप से बोलेंगे।

बच्चों को स्कूल व कक्षा में बातचीत के पर्याप्त मौके दिये जायें। यह कार्य उनकी भाषा के विकास में मददगार होगा। बातचीत भाषा सिखाने का जादुई माध्यम है। मौखिक अभिव्यक्ति के पर्याप्त अभ्यास के बाद लिखित काम की ओर कदम बढ़ाना ठीक रहेगा।

- बच्चों की झिझक तोड़ने के लिये कुछ सुझाव सोचें, बतायें।
- बच्चों को सुनने–बोलने का अवसर देने की बाबत क्या सुझाव देना चाहेंगे ?

कक्षा में बच्चे किन "विषयों" पर बातचीत कर सकते हैं ? उदाहरण के लिए – "आज स्कूल आते समय रास्ते में क्या–क्या देखा" "बस्ते में क्या है" आप कुछ और सुझाइये न।

लिखित भाषा की पहचान अर्थात भाषा पढ़ने की तैयारी

बच्चे लिखित भाषा के संपर्क से ही पढ़ना–लिखना सीखते हैं। इसलिये पाठ्यपुस्तकों के अलावा तरह–तरह की पुस्तकों को देखना, उलटना–पलटना, उनके चित्र देखना, चित्रों पर बातचीत करना, पढ़ने की तैयारी के लिये छोटे–छोटे कदम उठाये जाने चाहिये। यह समझना है कि पुस्तक में आकृतियों के माध्यम से कुछ ऐसी बातें कही जाती हैं जो उसने मौखिक रूप से भी सुनी–समझी हैं वे अर्थपूर्ण शब्द हैं। बहुत जरूरी है कि शिक्षक रोचक कहानी–कविता पढ़कर सुनाए ताकि बच्चों के मन में पढ़ने का अर्थ बैठ जाये। स्कूल में पढ़ने–लिखने की कुशलता के इन पूर्वाभ्यासों पर पर्याप्त समय व ध्यान देने की जरूरत है। कहाँ मिलेंगी वे कवितायें कहानियाँ जो बच्चों को सुनायी जा सकती हैं ? आप अपना "गतिविधि बैंक" देखिये। वहाँ से कुछ मिल सकता है क्या ? ऐसी सामग्री किन स्रोतों से मिल सकती है ?

भाषा शिक्षण में यह दावा करना कि पढ़ाने की, पढ़ना सीखने की कोई एक सर्वमान्य पद्धति है, सरासर गलत है। दरअसल बच्चे अपनी पसंदीदा जगहों से भाषा के छोटे–छोटे टुकड़े उठाते हैं। इन टुकड़ों को मिलाकर उनकी भाषा की कुल समझ बनती है।

पढ़ने में वर्णमाला पद्धति का प्रयोग अरुचिकर है। बच्चे जब वर्णों को मिलाकर पढ़ते हैं तो उन्हें खासी उलझन होती है। वे अलग–अलग वर्णों का अर्थ ही नहीं समझ पाते।

एक नये छोटे बच्चे के लिए 'क' और 'कमल' या 'ख' और 'खरगोश' के बीच संबंध जोड़ना कठिन है। 'क' से शुरु होने वाला कमल है और 'ख' से शुरु होने वाला खरगोश है – हमारी पाठ्यपुस्तकों में भाषा की पहचान की शुरुआत इसी तरीके (एप्रोच) से की जाती है। 'क' बच्चे के लिये एक अमूर्त आकृति है और 'कमल' एक पहचानी हुई मूर्त चीज। इसलिये 'कमल' वह जल्दी पहचान जाता है। लेकिन 'क' का उपयोग और औचित्य समझने में काफी समय लगाता है। 'क' से 'कमल' सिखाने की कसरत छोटे बच्चों को अमूर्त से मूर्त की ओर ले जाने की कार्यवाही है। जो छोटी कक्षा के लिये बेहद कठिन और अव्यावहारिक है। बेहतर होगा कि उन्हें 'कमल' से 'क', 'म', 'ल' की ओर ले जाया जाय।

शुरु में उन्हें परिचित चित्रों–शब्दों की सहायता से अभ्यास कराना ठीक रहेगा। शब्दों के बार–बार प्रयोग के बाद उसकी ध्वनि सीख जायेंगे। बच्चे वर्णों की पहचान कर पायेंगे। रुचिकर और परिचित शब्दों के बीच जो अक्षर बार–बार उनके कानों–आंखों की पकड़ में आते हैं बच्चे उन्हें जल्दी पहचानने लगते हैं। इसके बाद वे अलग–अलग अक्षरों से नये शब्द बनाने के चरण पर पहुंच सकते है। यानि पढ़ना सीखने में शब्द सीखकर अक्षर सीखने की प्रक्रिया भी अपनाई जा सकती है।

पढ़ना सिखाने की क्रिया को बच्चों के किसी रूचिकर संदर्भ से जोड़ना जरूरी है। यदि विषयवस्तु बच्चों की रूचियों पर आधारित है तो बच्चों को उसका अर्थ समझने में आसानी होगी। बच्चों के पढ़ पाने के लिये आवश्यक है कि वे इन वाक्यों में उभरते संदर्भ की छवि बना पायें।

पढ़ने में बच्चों को दो तरह की सामग्री दी जा सकती है। एक – परिचित संदर्भ वाली दो। अपरिचित संदर्भ वाली। परिचित सामग्री से जुड़े नाम और शब्द जो उनके सुनने, बोलने और व्यवहार में बार–बार आते हैं – पढ़ने में उन्हें आसानी होती है।

अपरिचित सामग्री के प्रयोग के दौरान हमें नये, अपरिचित शब्द कम संख्या में प्रयोग करने चाहिये। बेहतर हो कि वे परिचित शब्दों के बीच–बीच में आयें। ऐसा होने पर बच्चे परिचित शब्दों की मदद से अपरिचित शब्दों के अर्थ का अनुमान लगा लेते हैं। किताब के अक्षर बड़े हों और पढ़ने की सामग्री में चित्रों की बहुलता हो तो बच्चों को पढ़ा हुआ समझने में सहायता मिलती है।

लिखना :

लिखना सिखाने में पहले समान ध्वनि और आकार वाले शब्दों का उपयोग जरूरी है। इससे बच्चों की लिखित भाषा से पहचान शुरु होती है। पहचान पूरी होने तक बच्चा एक–दो वर्णों को समझने लगता है। लिखना सिखाने के पहले बच्चों को ध्वनियों, चित्रों, आकृतियों की पहचान के खूब अभ्यास कराये जाने चाहिये। रेत या मिट्टी पर आकृतियाँ बनाने, आकृतियां पहचानने, पेंसिल (छोटी और बड़ी) पकड़ने तथा चलाने, खुदे या उभरे अक्षरों पर उंगलियां चलाने, हवा में अक्षर बनाने, अक्षरों या शब्दों के टुकड़ों को मिलाने के ढेर सारे अनुभव बच्चों के पास हों तो वे आसानी से लिखना सीख लेते हैं। लगातार के इन अभ्यासों से उनकी मांसपेशियों/उंगलियों में लिखने के लिये जरूरी लोच और संतुलन पैदा हो जाता है।

लिखने का एक मानसिक पहलू भी है। इसे बच्चों में लिखने की धारणा बनना या लिख सकने का विश्वास पैदा होना भी कह सकते हैं। लगातार रूचिकर अभ्यासों के बाद बच्चों में यह धारणा बनती है कि चित्रों से जो बात कही जा सकती है वही बात लिखकर भी बताई जा सकती है।

लिखने में कुशलता हासिल करने के लिये रोचक तथा परिचित प्रसंगों से – बच्चों को लिखने के लिये प्रेरित करना ठीक रहता है। हिन्दी वर्णमाला की जिन ध्वनियों का प्रयोग बार–बार होता है और जिनकी आकृति बनाने में आसान है, भाषा सीखने की क्रिया उन्हीं से शुरु की जानी चाहिये। धीरे–धीरे आगे बढ़ते हुए बाकी वर्णो को भी समेटा जा सकता है।

> होली के बाद जब स्कूल खुला तो अभी उनके हाथ, मुँह, कान पर जगह–जगह रंग लगे थे। उन्होंने रगड़कर छुटाया होगा जरूर। मैंने कक्षा ४ और ५ को बाहर मैदान में बिठाया। उनसे पूछता रहा, तुमने होली कैसे मनाई, क्या किया। मैंने भी बताया। फिर सबको एक–एक फ्लैश–कार्ड बांट दिया कि अभी जो जो तुमने बताया है, इस पर दो–दो वाक्य लिखो। बाद में उन सबके वाक्यों को श्यामपट्ट पर लिखा गया और इस तरह सबने मिलकर होली पर निबंध बनाया।
>
> ***खैराबाद, सीतापुर***

बड़ी कक्षाओं में बच्चों को सुलेख में दक्ष बनाने के लिये निश्चित खानों में अक्षरों–शब्दों को लिखाने का अभ्यास कराना उपयोगी होगा। यह अभ्यास कई प्रकार के खानों में कराना चाहिये – कभी छोटे तथा कभी बड़े खानों में। निरन्तर अभ्यास से बच्चे सुडौल व खूबसूरत अक्षर व अंक बनाने में माहिर हो जाते हैं।

भाषा का तार्किक क्रम समझना भी बच्चों के लिये महत्वपूर्ण है। किसी चीज या प्रसंग के बारे में बार–बार और कई तरह से लिखने पर वे भाषा के तार्किक क्रम को भी समझने लगते है।

बोलने की ही तरह लिखने का भी स्पष्ट उद्देश्य होता है :

१. अपनी भावनाओं को दूसरे तक पहुंचाना।

२. किसी को कोई जानकारी, किसी सन्दर्भ में कोई निर्देश देना, रिकार्ड रखना, किसी जानकारी का दस्तावेजीकरण करना, उसे व्यवस्थित करना आदि।

अभिव्यक्ति और कल्पनाशीलता के गुण बच्चों में घर से ही मौजूद रहते हैं। कक्षा तीन से भाषा ज्ञान की आरंभिक नींव पर उनमें तर्कशक्ति, सोचने–समझने व अवधारणाओं के विकास का दौर शुरु हो जाता है। रोचक कहानियों, गीतों में वे भाषा के विकसित रूप और सौन्दर्य को समझने, परखने और आत्मसात करने लगते हैं। उनकी मौखिक तथा लिखित अभिव्यक्तियों में क्रमशः सुधार होने लगता है।

लिखकर कहने की कुछ सीमांए होती हैं। मौखिक भाषा के साथ आप दूसरे को अपनी बात समझाने के लिये अंग संचालन व चेहरे पर हाव–भाव झलकाने (अभिनय) की कार्यवाहियाँ कर सकते है। इससे मौखिक भाषा का काम आसान हो जाता है। लेकिन लिखकर कहने में शरीर के बाकी अंगों से कोई सीधी मदद नहीं मिलती है। लिखना इसीलिये भाषा के मौखिक उपयोग की तुलना में कठिन हो जाता है।

भाषा सीखने सिखाने की कठिनाइयाँ और हल

- भाषा और बोली एक ही बात है। एक समय जहां ब्रज साहित्य की भाषा थी, आज उसकी जगह खड़ी बोली ने ले ली है। अंग्रेजी ने अपनी लिपि लैटिन से ली हैं। वास्तव में बोली और भाषा का अंतर भाषाई नहीं बल्कि राजनैतिक है– किस समय समाज किस भाषा को कितना महत्व देता है, यह तय कर देता है कि वह "मानक" है या नही। हमें इनमें फर्क करने की रूढ़ि छोड़नी होगी। प्रायः बच्चे शुरुआती दौर में अपनी घरेलू भाषा का प्रयोग बोलने में करते हैं। लेकिन जब हम टोका–टाकी शुरु कर देते हैं तो उनमें अपनी घरेलू भाषा के प्रति हीनभावना पनपने लगती है। यहीं भाषा–शिक्षण में रूकावट आ जाती है।
- बच्चों में अलग–अलग कारणों से झिझक होती है। इन कारणों को समझना होगा। वे बोलने में संकोच करते हैं। सहज रूप से इनकी झिझक तोड़ने के लिये, चित्र, कहानी, कविता, बातचीत, चर्चा जैसी गतिविधियों को अपनाना चाहिये।
- प्रायः कक्षा १ या २ में ही भाषा की शुद्धता या मानक भाषा और सुलेख पर जोर दिया जाने लगता है। यह सोच भी भाषा शिक्षण में कठिनाई का एक कारण है।
- भाषा सीखने के दौरान मौखिक और लिखित पक्षों में असंतुलन बना रहता है। बेहतर होगा कि आरंभ में मौखिक तथा बाद में पढ़ने व लिखने पर ध्यान दें। बाद में भी दोनों में संतुलन बनाये रखना होगा।
- पढ़ना सीखते हुए प्रायः बच्चे मात्रा, उच्चारण कुछ अक्षरों तथा संयुक्ताक्षरों पर अटकते हैं। यहां पर उन्हें मदद और आत्मविश्वास की जरूरत होती है। इस काम के लिये कुछ उपाय सोचें और बतायें।

- ❖ व्याकरण जानना जरूरी है। जिस भाषा में बच्चा बोलता है उसमें वह भाषाई गलतियों को पहचान ही लेता है (नहीं तो बात–चीत है कैसे करता)। समस्या तो तब आती है जब हम उसे मानक भाषा के व्याकरण की ओर ले जाना चाहते हैं। लेकिन यह तो भाषा का पर्याप्त उपयोग करने पर ही बेहतर ढंग से सीखा और समझा जा सकता है न कि उसके बारे में पढ़कर। व्याकरण के अमूर्त नियम याद करवाना भाषा सीखने की सहज प्रक्रिया से मेल नहीं खाता। इनका उपयोग ऊँची कक्षाओं में ही ज्यादा उचित है। व्याकरण और शब्दकोष, शुद्ध और अशुद्ध भाषा सब बाद में लें। पहले भाषा बोलने दें और स्वाभाविक रूप से सीखने का मौका दें। अभिव्यक्ति का साहस और परिस्थिति के अनुसार अभिव्यक्ति की क्षमता पहले आना जरूरी है।
- ❖ बच्चों को बार–बार गलतियां बताने या उन्हें गलत साबित करने से भी सीखने में रूकावट आती है। बेहतर हो कि उसकी खूबियों को प्रोत्साहित करें। इसके जरिये उनकी गलतियां कम की जा सकती है।

कैसी हो भाषा की कक्षा ?

भाषा शिक्षण में कक्षा के वातावरण की प्रभावशाली भूमिका होती है। कक्षा का वातावरण दिल की बात कहने के लिये प्रेरित करने वाला होना चाहिये। यदि यह वातावरण कुछ कहने की ललक पैदा करने वाला हो तो बच्चे आगे बढ़–बढ़ कर अपनी बातें कहेंगे ही।

वातावरण निर्माण के लिये कक्षा में पुराने समाचार–पत्रों की कटिंग, चित्र, कहानी, कविताओं, की फाइलें, पुरानी पत्रिकाओं से, कैलेण्डर, में जिन पर दृश्य–चित्र बनें हो, घरों से इकट्ठी की गयी चिठ्ठियाँ, छोटी–छोटी कविताओं पर पोस्टर, चित्र कथाएं और अन्य सामग्रियां रखी/लगी हों, वहां एक दूसरे के अनुभव सुनना, कहानी–कविता कहना–गढ़ना, अभिनय करना, नाटक खेलना–बनाना, अन्त्याक्षरी आदि गतिविधियों का आयोजन किया जाना चाहिये। परिचित वर्णों से शब्द, शब्दों से वाक्य, वाक्यों से अधूरी कहानी पूरी करना आदि काम भी हों।

कक्षा में कविताओं, कहानियों की रंग–बिरंगी किताबें एवं बच्चों की पत्र–पत्रिकाएं भी उपलब्ध हों जिन्हें बच्चें उलट–पलट सकें। बच्चों को इस सामग्री का चुनाव, उपयोग करने के लगातार अवसर और आजादी मिलें।

कक्षा में बच्चों को बातचीत/गपशप की आजादी और अवसर मिले। वे घर–परिवार, पास–पड़ोस के बारे में एक–दूसरे से जानकारियां लें और दें। बार–बार मिले इन मौकों से वे बातचीत में कुशलता हासिल कर सकेंगे। नहीं बोलने वाले बच्चों को कुछ आश्चर्यचकित करने वाले या अजूबे चित्र दिखाकर बुलवाने का प्रयास किया जा सकता है। जैसे – पेड़ पर मगरमच्छ या नाव में छाता लगाये बैठा मेंढक आदि।

भाषा की कक्षा में इस तरह की सामग्री की व्यवस्था करने और भाषा सीखने–सिखाने की उपयुक्त गतिविधियों का आयोजन करने में आपकी भूमिका महत्वपूर्ण है। बच्चे के लिए भाषा एक औजार की तरह है। शिक्षक के रूप में हम बच्चे के भाषा–विकास में जितनी मदद करेंगे आगे चलकर उसे उतनी ही सहूलियत होगी।

गणित

गणित क्या है ?

गणित हमारे जीवन का जरूरी हिस्सा है। एक सिर, दो आँखें, चार हाथ पैर, आदमी खुद सिर से पैर तक एक चलता फिरता गणित है। हमारी रसोई की रोटियों से लेकर धरती के ओर–छोर और आसमान तक गणित फैला है। हमारे चलने–फिरने, उठने बैठने, जागने सोने में गणित है। बच्चे, जवान, बूढ़े, पढ़े–लिखे, अनपढ़ कोई भी गणित के बिना एक कदम नहीं चल सकते। दूसरे शब्दों में कहा जाय तो गणित हमारे चारों तरफ फैली बिखरी चीजों को जरूरत के मुताबिक गिनने, नापने, तौलने, खाली करने, भरने या इधर–उधर करने की कार्यवाहियों/गतिविधियों का नाम है। गणित की गतिविधियाँ सैकड़ों तरह से की जाती हैं। इन्हें हम मूर्त वस्तुओं के जोड़, घटाव, गुणा, भाग से शुरू करते हैं और अंकों के बीच होने वाली ढेरों अमूर्त क्रियाओं तक पहुँच जाते हैं। इसी दौरान सीख लेते हैं हम गणित के बहुत से नियम।

पर क्या हमारे स्कूलों में ऐसा होता है ?

गणित शिक्षण की वर्तमान दशा

पुराने नजरिये से बनाये गय पाठ्यक्रम व किताबें कौशलों पर बहुत कम ध्यान देते हैं। मसलन गिनती सुनाना, जोड़ घटाव, गुणा व भाग करना। स्कूलों और कक्षाओं में भी सब कुछ इन्हीं कौशलों तक सीमित रहता है। इनमें बच्चों को संख्याओं का एहसास, विभिन्न क्रियाओं की समझ व जगह (स्पेस) की अवधारणा जैसी चीजें छूट जाती हैं।(वैसे आप जान ही गये होंगे कि इस वर्ष 1999 से हमारे प्रदेश में गणित का नया पाठ्यक्रम व पाठ्यपुस्तकें लागू हो रहीं है। इन पुस्तकों का नज़रिया पहले से कहां भिन्न है, यह भी इसी प्रशिक्षण कार्यक्रम का हिस्सा है।)

पहाड़े बनाने की जगह पहाड़े रटाने तथा क्रियाओं के अनुभव से गुजारने की जगह बच्चों को सूत्र या परिभाषाएं याद कराने/रटाने पर जोर रहता है। क्या बच्चे लगभग वर्ष भर इन्हीं सूत्रों या परिभाषाओं या नियमों के इर्द–गिर्द घूमते नहीं रहते हैं ? जैसे :–

चाल = दूरी/समय

या

$$\textbf{ब्याज} = \frac{\textbf{मूलधन x दर x समय}}{१००}$$

ठोस वस्तुओं से खेलने का मौका दिये बिना हम बच्चों को सीधे अंकों अर्थात (प्रतीकों) से क्रिया करने में भिड़ा देते हैं। सूत्रों, परिभाषाओं व अमूर्तता से बँधे – ऐसे बच्चे किताब से बाहर का कोई सवाल सामने आते ही चकरा जाते हैं।

परीक्षा की कापियाँ जाँचते समय उत्तरों को ज्यादा महत्वपूर्ण माना जाता है। जोर इस बात पर नहीं होता कि सवाल हल करते हुए बच्चे ने क्या समझ दिखाई है। इसके बजाय जाँचा यह जाता

है कि बच्चे ने बताया गया सूत्र, विधि, या परिभाषा याद रखी या नहीं ? कुल मिलाकर गणित सीखने–सिखाने के मौजूदा तरीकों से बच्चों के खुद सक्रिय होने, चुनौतियाँ स्वीकारने तथा तर्क व सवाल करने के मौके नहीं के बराबर हैं। किसी स्कूल में वे शायद ही यह पूछते हों कि "तीन नवा सत्ताइस ही क्यों रटा जाय ?" या "ब्याज निकालने के लिये मूलधन x दर x समय करना और फिर १०० से भाग दे देना ही क्यों जरूरी है ? क्या इसके लिये कोई और ढंग नहीं अपनाया जा सकता ?"

गणित को लेकर कुछ गलत धारणाएं

गणित को लेकर कुछ अजीबोगरीब धारणाएं भी प्रचलित हैं, जैसे – "गणित एक ठोस विषय है" (जैसे बाकी विषय पिलपिले हों), "गणित बाकी विषयों से ज्यादा कठिन है" "गणित गंभीर विषय है, यह रूचिकर हो ही नहीं सकता", "गणित वाले मास्साब खास तरह के आदमी होते हैं – वे हँसते मुस्कराते नहीं हैं" "लड़कियाँ गणित में कमजोर होती हैं" आदि आदि। गणित और लड़कियों को लेकर तो अन्धविश्वास इतना ज्यादा रहा है कि कुछ समय पहले तक उन्हें गणित के बदले "गृहविज्ञान" लेना पड़ता था।

दरअसल ये मान्यताएं गणित सीखने–सिखाने के नीरस तरीकों से पैदा हुई हैं। लड़कियों को यों ही गणित में कमजोर समझने की धारणा समाज में उनकी कमजोर स्थिति के कारण उपजी है। पर इन धारणाओं का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है, और ये गलत हैं।

स्कूल/कक्षा में इन धारणाओं को मानने व चलाने से नुकसान ही होगा। गणित को 'ठोस' या 'श्रेष्ठ' घोषित करने पर बच्चे बाकी विषयों की उपेक्षा करने लगेंगे। इसी प्रकार लड़कियों को गणित में कमजोर बताने से उनमें हीन भावना घर कर जायेगी।

गणित से भय

स्कूलों में गणित को एक डरावना विषय भी माना जाता है। इसके कई कारण हो सकते हैं। संभव है शिक्षक को गणित की अवधारणाएं स्पष्ट ही न हों। संभव है कक्षा में ठोस वस्तुओं का प्रयोग न होने से बच्चे गणित की अमूर्तता से डर जाते हों। शिक्षक का व्यवहार तथा रूचिकर ढंग से बच्चों के दैनिक जीवन से जोड़कर न पढ़ाना भी इसका कारण हो सकता है। शिक्षक बच्चों की गलतियों को नकारात्मक नजरिये से देखें तो भी उनमें अपराध बोध पैदा हो सकता है और वे गणित से डर सकते हैं। गणित के प्रति भय या रूचि जगाना काफी हद तक अध्यापक की सिखाने की तकनीक पर निर्भर है।

बच्चों की पूर्व जानकारी/स्कूल से पहले गणित

स्कूल आने तक बच्चों के पास गणित के कई अनुभव इकट्ठे हो जाते हैं। वे रसोई की रोटियाँ गिन सकते हैं। 'अक्कड़–बक्कड़' खेलते हुए अपने गोइयाँ (साथियों) को गिन सकते हैं। उनके पास ठेलों से गुड़ व मूँगफली खरीदने या दुकान से टॉफी, चॉकलेट या गुड़कट्टी खरीदने के अनुभव

होते हैं। उन्हें कम–ज्यादा, हल्का–भारी, दूर–पास का भी कुछ ज्ञान होता है। स्कूल में कक्षा से अलग भी उनकी अपने ढंग से गणित सीखने की क्रिया जारी रहती है। घड़ियाँ देखना वे भले ही न जानते हों लेकिन समय के संकेत वे पहचानते हैं। पहाड़ की चोटी पर बसे गाँव तक आ गई धूप की रेखा देख कर या चार बजे के आसपास शुरू होने वाली चक्की की 'पुक–पुक' आवाज सुनकर वे छुट्टी के समय का अनुमान लगा लेते हैं और स्कूल से भाग छूटते हैं। कुछ बच्चे बसों या ट्रकों के नम्बर याद रखते हैं और दूर से ही उन्हें पहचान लेते हैं।

क्या हम उनकी इन घड़ियों की आवाजें सुन पाते हैं? या किसी भी प्रकार के उनके पूर्वज्ञान का सीखने–सिखाने में इस्तेमाल करते हैं?

कैसे हो कक्षा में गणित सीखना–सिखाना ?

बच्चे ठोस वस्तुओं के साथ खेलने में मजा लेते हैं इसलिये कक्षा में पहले इनसे ही शुरूआत करनी चाहिये। चीजें एकत्र करके उनसे खेलने, उन्हें तरह–तरह से परखने का बच्चों को मौका दिया जाना चाहिये। इनकी मदद से 'छांटने', रंग पहचानने, जोड़ियाँ बनाने, क्रम को समझने, घर–गाँव के मॉडल बनाने जैसे काम करवाये जा सकते हैं।

बच्चों के साथ मिलकर मिट्टी के खिलौने, रेत और मिट्टी पर आकृतियाँ बनाई जा सकती हैं। उभरे या खुदे हुए अंकों पर अंगुलियाँ फिराने का काम हो सकता है।

ठोस वस्तुओं के साथ खेलते या काम करते हुए बच्चों के साथ बातचीत करना या उनके अनुभव सुनना बहुत जरूरी है। अक्सर जब हम कक्षा में ठोस वस्तुओं का प्रयोग करते हैं तो एक ही तरह की ठोस वस्तु का उपयोग करते हैं, जबकि तरह–तरह की ठोस वस्तुओं के साथ काम करने से बच्चों की समझ अधिक पक्की होती है।

गणित सीखने–सिखाने का क्रम

बच्चे गणित को निम्नांकित क्रम में आसानी से सीखते हैं, जो "मूर्त से अमूर्त की ओर" पर आधारित है।

E ↓ L ↓ P ↓ S

- **E - (Experience)** ठोस वस्तुओं से अनुभव।
- **L - (Language)** भाषा द्वारा अभिव्यक्ति
- **P - (Picture)** चित्रों का उपयोग
- **S - (Symbol)** संकेतों का प्रयोग

क्या इसी क्रम को सिखाने में प्रयोग किया जाना बच्चों की दृष्टि से उचित नहीं होगा ? इसे अपना कर देखिये।

बच्चे अपनी परिचित चीजों – घर, दुकान, स्कूल आदि के चित्र बना सकते हैं। जमीन पर कंकड़, फूल, निबौरियाँ आदि जमा कर आकृतियाँ बनाई जा सकती हैं। आकृतियों में कागज कटवाये जा सकते हैं। इन कामों का पर्याप्त अनुभव हो जाने के बाद अंकों की पहचान और उन्हें बनाने का काम शुरू करना ठीक रहेगा।

बेहतर हो कि गिनतियाँ–पहाड़े रटने की जगह गिनतियों का एहसास कराने और पहाड़े बनाने पर जोर रहे। जोड़, गुणा, घटाना व भाग की क्रियाएं पहले ठोस वस्तुओं के साथ की जाएं, तब अंकों के साथ। वस्तुओं के साथ इन क्रियाओं का पर्याप्त अनुभव अंकों के साथ क्रियाओं को आसान बनायेगा।

जोड़, गुणा, घटाना व भाग की शुरूआत भले ही ठोस वस्तुओं से हो लेकिन सीखना सार्थक तभी है जब बच्चे इन क्रियाओं की अवधारणा तक पहुँचे। वे जानें कि गिनती 'एक में एक जोड़नें, से बनती है। जोड़ने का मतलब चीजों को मिलाना और गुणा का मतलब एक ही मात्रा में चीजों को बार–बार बढ़ाना है – दोनों ही क्रियाओं में चीजें बढ़ती हैं। या घटाने का मतलब चीजों को कम करना है या भाग का मतलब उन्हें बराबर बाँटना है। इन दोनों ही क्रियाओं में चीजें घट जाती हैं।

बच्चों में जगह (स्पेस) की समझ बनाना भी जरूरी है। कौन चीज कहाँ रखी गई है तथा वह कहाँ ठीक रहेगी – ये 'जगह की व्यवस्था' से संबंधित बातें हैं। 'जगह की व्यवस्था' गणित शिक्षण का महत्वपूर्ण हिस्सा है। बच्चों को ज्यामिति सिखाने का मकसद भी शायद यही है। 'हाथी इतना बड़ा है कि स्कूल के दरवाजे से अन्दर नहीं घुस सकता' या 'कुत्ते का पिल्ला झोले में नही आ सकता है' इसे बच्चे जानते और इस बाबत बातें करते हैं। जगह संबंधी और भी अनुभव उनके पास होते हैं। वे जानते हैं कि हाथ लंबा करके वे पेड़ से आम नहीं तोड़ सकते या खिड़की के सरियों के बीच से निकल कमरे के अंदर नहीं घुस सकते। उनके इन अनुभवों को आधार बनाकर सीखने –सिखाने की परिस्थितियाँ रचना ठीक रहेगा। आमतौर पर बिन्दु, रेखा, त्रिभुज आदि की परिभाषाएं रटाने से – सीखना–सिखाना निहायत नीरस और उबाऊ काम बन जाता है। बेहतर है कि इन आकृतियों को अपने आसपास खोजा जाय या उनका निर्माण किया जाय। 'जगह' संबंधी अनुभवों से सिलसिलेवार गुजरने के बाद बड़ी कक्षाओं में 'आयतन' व 'क्षेत्रफल' की समझ बनाना आसान होगा।

मौखिक गणित

मौखिक गणित बच्चों के लिये बहुत उपयोगी है। यह बच्चों में सोचने की प्रक्रिया को बढ़ावा देती है। पर यह ध्यान रखना जरूरी है कि मौखिक गणित के सवाल परिवेश से जुड़े हों और बच्चे उनका व्यवहारिक अर्थ निकाल सकें। सवालों में दिये घटनाक्रम का औचित्य भी बच्चे समझ सकें।

> छोटे बच्चों की कक्षा में शिक्षिका एक कहानी सुना रही थी। कहानी आगे बढ़ती है और उसमें एक बुढ़िया का प्रसंग आता है। "वो बहुत बूढ़ी थी। उसके बाल बिल्कुल सफेद। वह झुककर छड़ी के सहारे चलती थी, ऐसे" और शिक्षिका ने इसे प्रदर्शित भी किया।
>
> फिर बच्चों से सवाल किया गया "उसकी उम्र कितनी रही होगी ?" बच्चों की ओर से एक उत्तर आया "दस साल"। दरअसल बच्चे अपने संदर्भ से जोड़कर ही चीजों को देख पाते हैं, देखते है।

वातावरण से शिक्षण सामग्री

यह जरूरी नहीं है कि गणित सीखने–सिखाने के लिये किसी 'रेडीमेड' सामग्री का इंतजार किया जाय। बेहतर होगा कि हम अपने आसपास से ही सस्ती और आसानी से मिल जाने वाली टिकाऊ सामग्रियाँ हासिल करें। हमारे परिवेश में ऐसी ढेर सारी चीजें मिल जाती हैं :

जैसे – पंख, पत्तियाँ, फूल, दाने, तरह–तरह के बीज, बोतलों के ढक्कन, लकड़ी के टुकड़े, मनके, शंख, तीलियाँ, माचिस के खाली डिब्बे, बटन, खाली शीशियाँ, शरीर के अंग, कमरा, खिड़की, दरवाजे, फर्श, पुराने कैलेन्डर, गत्ते के डिब्बे आदि। आप इस सूची को बढ़ा सकते हैं।

इन सामग्रियों के उपयोग या इस्तेमाल के तरीकों को बच्चों की संख्या के हिसाब से बदला जा सकता है। पर यह तय है कि इनके ठीक–ठाक प्रयोग से गणित सीखना–सिखाना एक मजेदार और प्रभावी काम बन जायेगा। पाठ्यक्रम और किताब के पाठ देखकर प्रायः यह अंदाजा लगा सकते हैं कि किसी दक्षता/कौशल का विकास करने में कौन सी सामग्री उपयोगी हो सकती है। क्या आप इस तरह की सूची बनाना चाहेंगे ?

————————————————————————————————

————————————————————————————————

————————————————————————————————

————————————————————————————————

————————————————————————————————

गणित में भाषा और संदर्भ

गणित सीखने में अध्यापक की भाषा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। गतिविधि कुछ कमजोर भी हो तो अध्यापक की सरल–सरस भाषा इस कमी को पूरा कर देती है। लेकिन नीरस, लंबे–लंबे, आदर्शवादी, सूखे शास्त्रीय शब्दों वाली भाषा सुनकर बच्चे उकता जाते हैं। ऐसे में कैसी भी मजेदार गतिविधि हो, अपना प्रभाव खो देती है, टाँय–टाँय फिस्स हो जाती है। ऐसी भाषा वे पढ़ना तो दूर देखना भी पसंद नहीं करते।

नियम या सूत्र बनाने की कोशिश में भाषा बच्चों की दुनियाँ से कितनी दूर निकल जाती है – नीचे के उदाहरणों में इसका जायजा लिया जा सकता है। – "विषम भिन्न को मिश्र भिन्न में अंश में हर से भाग देकर बदला जाता है। भागफल पूर्ण संख्या वाला भाग और शेषफल बटा हर भिन्नात्मक भाग कहलाता है।" (बाल अंकगणित, भाग ४ पृष्ठ ८७) "जब हम विजातीय भिन्नों को जोड़ते हैं तब उन भिन्नों को सजातीय भिन्नों में बदलते हैं। ध्यान रहे कि भिन्नों के समान सर्वनिष्ठ हर सबसे छोटा होना चाहिए अर्थात् हरों का लघुत्तम समापवर्त्य होना चाहिए" (बाल अंकगणित भाग–४, पृष्ठ ६४)

बच्चे सवालों के विवरणों/संदर्भों पर भी सोचते हैं। मिसाल के लिए एक इबारती सवाल है – "एक पेड़ पर २० चिड़ियाँ बैठी थी, १० चिड़ियाँ उड़ गयी, पेड़ पर कितनी चिड़ियाँ बची ?" कोई भी मास्साब चाहेंगे कि बच्चे इस सवाल का झटपट उत्तर दें डालें। ऐसा न होने पर वे झुंझला जाते हैं। लेकिन बच्चे जहाँ फँसे हुए हैं, मास्साब शायद उधर नहीं देख पा रहे हैं। पेड़ और चिड़ियाँ बच्चों के लिए काफी परिचित चीजे हैं, वे इनके बारे में सोच तो रहे हैं। लेकिन वे यह नहीं समझ पा रहे हैं, कि अच्छी खासी चैन से बैठी चिड़ियों में से १० अचानक क्यों उड़ गई और ऐसा कैसे हुआ कि बाकी नहीं उड़ीं ? यह समझना जरूरी है कि बच्चे सवालों के विवरणों और संदर्भों पर भी सोचते हैं। उनमें इस तरह के सवालों का झटपट उत्तर देने का कौशल अभ्यास के बाद विकसित होता है।

गणित में अभ्यास व रटना

गणित सीखने में "अभ्यास" बहुत जरूरी है। अक्सर हम कक्षाओं में 'रटने का अभ्यास' करते हैं। जबकि अभ्यास में सृजनशीलता और नवीनता की संभावनाएं रहती हैं। इसमें किसी क्रिया को समझ और तर्क के साथ करने की गुंजाइश होती है। इसके विपरीत रटना एक मशीनी क्रिया है। इसमे किसी बात को बगैर सोचे–समझे बार–बार दोहराना होता है। इसमें मस्तिष्क कम सक्रिय होता है। शायद हमसे कक्षा में चूक हो जाती है। हमारा गणित शिक्षण का तरीका बच्चों को रटने की ओर प्रेरित करता नज़र आता है।

छुट्टी से थोड़ा पहले मैं रोज स्कूल में, सामूहिक रूप से पहाड़े याद कराने का कार्यक्रम देख चुका था। इस वक्त सारा स्कूल पहाड़ामय हो उठता था। बच्चों के कई उपसमूह इस रटंत के प्रति अपनी खीझ पहाड़ों की लय को ऊँचा खींच, लगभग चीखने जैसी मुद्रा में होठों को दायें बाँयें ज्यादा फैलाकर, चौड़ा करके व्यक्त करते थे। कुछ बच्चे इस समूची प्रक्रिया को शायद मुँह चिढ़ाने के लिये जानबूझकर मुँह से "यां यां, क्यां, क्यां" या ऐसी ही कुछ आवाजें निकालते रहते थे।"

गणित का सौन्दर्य

रूचि लेकर और गतिविधियों की मदद से कक्षा में काम किया जाय तो गणित सीखना सिखाना एक मनोरंजक काम बन जाता है। इससे बच्चों में कई क्षमताएं विकसित होती हैं। बच्चों में क्रमबद्धता की समझ पैदा होती है।. तर्क व सोचने की क्षमता बढ़ती है। बच्चे संश्लेषण–विश्लेषण करना, निर्णय लेना व निष्कर्ष निकालना सीखते हैं। गणित के साथ–साथ ही भाषा की समझ बनती है। इससे बच्चे सोचने समझने की समस्याएं हल कर सकते हैं।

पैटर्न डिजाइनिंग, वास्तुकला तथा चीजों/जगहों की बाहरी–भीतरी सज्जा में गणित का सौन्दर्य ही है। लगातार गणित की गतिविधियों से बच्चों में इनका सौन्दर्यबोध जगाया जा सकता है।

गणित की कठिनाइयाँ

गणित की कठिनाइयाँ बहुत कुछ कक्षा में अपनाये जा रहे सीखने–सिखाने के तरीकों पर .भी निर्भर करती है। कई बार कोई चीज/अवधारणा किसी कक्षा के लिये मुश्किल होती है पर वही अगली कक्षा में आसान साबित हो जाती है। फिर भी कुछ क्रियाऐं/सम्प्रत्यय पहचाने गये हैं जिन्हें अलग–अलग कक्षाओं में मुश्किल और आसान माना जाता है।

कक्षा १ में 'शून्य' स्थानीय मान और घटाने की अवधारणाएं, कक्षा २ में हासिल लेना, इबारती सवाल, भिन्न, नापना–मापना व कक्षा ३ में गुणा, भाग, भिन्न, पैमाना और दशमलव बच्चों को कठिन लगते हैं। जैसे –

जोड़ – में हासिल लेना ?

```
   १२६
 + १२६
 -----
   १२६
 -----
```

बच्चे इसे ऐसा करते हैं।

```
   १२६
 +  ३६
 -----
  १५१६
 -----
```

घटाने में–उधार लेना

```
   ८१
 – ६७
 ----
   १४
 ----
```

बच्चे ऐसा करते हैं

```
   ८१
 – ६७
 ----
   २६
 ----
```

–एक से सात घटेगा नही सात से एक घटाकर लिख दिया।

इसी प्रकार कक्षा ३ बच्चों को दशमलव और भिन्न वाले प्रसंग कठिन प्रतीत होते हैं। कठिनाईयों के ऐसे स्थल या प्रसंग आप भी खोजें।

गणित में मूल्यांकन

यह मान्यता अब आम होती जा रही है कि केवल परीक्षाओं के जरिए मूल्यांकन एकांगी मूल्यांकन हैं। यह बच्चों के पूरे व्यक्तित्व उनकी खूबियों और कमजोरियों को नहीं समेटता। बच्चे रोज बरोज नए प्रभाव ग्रहण करते और नए–नए व्यवहार सीखते हैं। उन्हें व्यक्त करते हैं। ऐसे में लगातार चलने वाली मूल्यांकन पद्धति (शायद सतत मूल्यांकन पद्धति) उपयोगी हो सकती है। इसमें अध्यापक की चौकस आँखें लगातार बच्चों को देखती पढ़ती रहती हैं। उनकी गतिविधियों का जायजा लेती रहती हैं। न सिर्फ बच्चों का बल्कि अपने काम और तरीकों की भी जाँच – परख करती रहती हैं साथ ही इस मूल्यांकन का रिकार्ड रखा जाना अनिवार्य है, ताकि बच्चों के लिए सीखना आसान बनाया जा सके।

दरअसल बच्चों के मूल्यांकन में अध्यापक का मूल्यांकन भी शामिल है। सच कहा जाय तो किसी भी विषय में बच्चे नहीं बल्कि सीखने–सिखाने की व्यवस्था या प्रणालियाँ असफल होती

हैं। **बच्चों का असफल होना तो किन्हीं असफल कोशिशों का परिणाम है।**

यद्यपि मूल्यांकन का कोई तयशुदा फार्मूला बनाना मुश्किल है फिर भी कुछ लचीले मानक बनाये जा सकते हैं। जैसे –

(क) किसी संक्रिया/पाठ को सीखने – सिखाने की परिस्थिति क्या थी?

(ख) सिखाए गए पाठ/संक्रिया का क्या प्रभाव पड़ा ?

(ग) प्रभाव ठीक नहीं था तो क्या शिक्षक ने अपनी कोशिशों का मूल्यांकन किया ?

(घ) सीखने–सिखाने में बच्चों की समूहवार सहभागिता कैसी रही ?

(ङ) क्या बच्चे सीखी हुई अवधारणा को अलग–अलग परिस्थितियों में इस्तेमाल कर पाते हैं ?

(च) क्या वे खुद अपनी व एक दूसरे की गलतियाँ पकड़ते हैं ?

(छ) दूसरों के द्वारा गलतियाँ बताने पर उनका रूख कैसा होता है?

(ज) परीक्षा की कापियाँ जांचना भी मूल्यांकन का एक पहलू है। इसमें केवल उत्तरों को महत्व देने की जगह बच्चों द्वारा सवाल हल करने में अपनाई गई प्रक्रिया और प्रदर्शित की गई समझ को जांचने पर जोर हो।

बच्चे कुछ खास सवालों को हल करने में ज्यादातर गलतियाँ करते हैं। शिक्षक इसे जानते हैं। पढ़ाने के दौरान, और बाद में भी, इसे पता करने की कोशिश कीजिये कि बच्चे अक्सर गलती कहाँ करते है।

बच्चों के लिये गणित सीखने का अनुभव एक सुखद अनुभव भी हो सकता है और वह भयावह अनुभव भी। यह सीखने सिखाने की परिस्थिति और प्रक्रिया पर निर्भर करता है कि बच्चे के लिये गणित प्रिय विषय बन जाये या "गणित" से डरने लगे।

पर्यावरणीय अध्ययन
(हमारे आस–पास का वातावरण)

पर्यावरणीय अध्ययन का वर्तमान स्वरूप

''गुलाम वंश का बादशाह बलबन अपने दरबार में न खुद हँसता था और न किसी को हँसने देता था।'' ''आस्ट्रेलिया की घुमावदार सींग और घुंघराले बालों वाली भेड़ का नाम क्या है ?'' ''जनसंख्या बढ़ने से गंदगी फैलती है। खाना कम पड़ जाता है। मकानों का अभाव हो जाता है।'' ऐसे या इनसे मिलते–जुलते वाक्य बच्चों के लिए लिखी पर्यावरण विषय की किताबों में, शिक्षकों की बातों में तथा स्कूल की परीक्षा के परचों में अक्सर सुनने देखने को मिलते हैं।

बच्चों के लिए पर्यावरणीय अध्ययन का मतलब क्या इस तरह की सूचनाओं को रट लेना भर है ? यदि वे इस तरह की ढेर सारी सूचनाएं/ज्ञानवर्धक बातें याद भी कर लें तो इस 'पर्यावरण ज्ञान' से उनके व्यक्तित्व और जीवन पर क्या फर्क पड़ जाता है ?

बादशाह बलबन अपने दरबार में कभी हँस दिया होता या आस्ट्रेलिया की भेड़ के सींग घुमावदार न होकर सीधे होते या अटलांटिक महासागर की लंबाई–चौड़ाई जरा कम–ज्यादा होती तो इससे उनका क्या बदल जाता ?

हमारे बीच पर्यावरण की जो सोच मौजूद है उसमें विषय के रूप में पर्यावरण बच्चों को केवल जानकारी और तथ्य परोसता हुआ दिखता है। उसी से उपजते हैं ये सवाल और हमसे समाधान की मांग करते हैं।

पर्यावरणीय अध्ययन है क्या ?

पर्यावरण का मतलब सिर्फ पुरवा–पछुआ हवाओं का चलना ही नहीं होता, पेड़–पौधों की जानकारी ही नहीं होता, सागरों, पर्वतों, राजा–रानियों के नाम रटना ही नहीं होता, इसका मतलब कुछ और भी है। यह ''कुछ और '' क्या है?

कहा जा सकता है कि एक बच्चे के लिए पर्यावरण का मतलब है "उसके **आस–पास की दुनिया**। इसमें मौजूद वो सारी चीजें जिन तक उसके हाथ–पैर, नज़र व कल्पनाएं पहुँचती हैं – बच्चे के माँ–बाप, दोस्त, पड़ोसी, खिलौने, स्कूल, सड़क, अस्पताल, गाँव, खेत, नदी, पहाड़, हवा, बादल, फूल, तितली, चाँद–तारे, अंधेरा, उजाला और वे सारी घटनाएं जो उसके चारों तरफ घटित होती हैं, उसे पीड़ा पहुँचाती हैं या फिर आनन्द देती हैं।"

पर्यावरण का मतलब है – बच्चों के इन सब से रिश्तों को समझना। उन रिश्तों को मजबूत बनाना और इन रिश्तों को एक सही दिशा में ले जाना।

पर्यावरणीय अध्ययन का उद्देश्य क्या है ?

कहा जा चुका है कि महज तथ्यों का ढेर परोसना पर्यावरण शिक्षा नहीं है। बल्कि इसका मकसद – बच्चों के अपनी दुनिया से संबंध को मजबूत और बेहतर बनाना है।

इसके अलावा इसका मकसद उन्हें खुद उनके आस–पास की दुनियाँ को परखने और जानने –समझने के मौके देना है। इसका मकसद उनमें लगातार नई–नई चीजों को जानने–खोजने की इच्छा पैदा करना है। इसका मकसद है कि उनमें शंकायें, सवाल, तर्क और आलोचना करने की क्षमता जागे। खुद पर उनका विश्वास जागे।

> कक्षा २ के बच्चे स्कूल के बरामदे में बैठे थे। दीवार पर बने चित्रों में से एक ही ओर इशारा करते हुये उनसे पूछा, यह क्या है? सभी बच्चों का जवाब था – 'झण्डा'।
> मैने फिर पूछा 'इसमें कितने रंग हैं?'
> अधिकांश बच्चों ने कहा 'तीन'।
> बगल के कमरे में बैठे कक्षा ५ के बच्चों में से कुछ झांककर यह सब देख रहे थे और इस बीच इस प्रश्नोत्तर कार्यक्रम में वे भी शामिल हो गये थे।
> लेकिन कक्षा २ के एक बच्चे की बिल्कुल अलग आवाज सुनाई दे रही थी। उसका जबाव था 'चार रंग है', सुनकर मुझे अटपटा सा लगा। फिर मैंने उससे पूछा, अच्छा बताओ तो चार रंग कौन–कौन से हैं?
> उसका उत्तर था 'लाल (केसरिया), सफेद, हरा, काला। उसकी उंगली झण्डे के बीचो–बीच बने चक्र के काले रंग की ओर तनी हुयी थी।

इसका मकसद है कि उनमें चीजों को देखने की अपनी दृष्टि विकसित हो, वे कार्य और कारण के संबंधों को पहचानें। उनमें सुन्दर–असुन्दर, अच्छे–बुरे को पहचानने की क्षमता पैदा हो। उनके पुराने कौशलों को बचाया जाय, उनमें नये कौशल आयें। वे 'ज्ञात' के सहारे 'अज्ञात' की कठिनाइयों से जूझने का साहस व क्षमता पाएं।

प्राथमिक कक्षाओं में सामाजिक और प्राकृतिक विज्ञानों के बीच अंतर करने की जरूरत नहीं है। इन्हें एक दूसरे से जोड़कर पढ़ाया जाना उपयोगी है। पर्यावरणीय अध्ययन को विज्ञान और प्रयोगशाला से बाँध दिया जाय तो बड़ी बुनियादी दिक्कत आ जाएगी। ऐसी हालत में सिर्फ तथ्यात्मक जानकारी ही हो पाएगी।

पर्यावरणीय अध्ययन में बच्चों को जो पता है उसे इस ढंग से उभारा जाय कि उनमें और जिज्ञासा उत्पन्न हो। वे ज्ञात से अज्ञात की ओर ललक और रुचि के साथ जा सकें। उम्र और स्तर का ध्यान रखते हुए बच्चों की उत्सुकताओं को उनकी कल्पनाशीलता से जोड़कर ज्यादा प्रभावी बनाया जा सकता है।

पर्यावरणीय अध्ययन के क्षेत्र

पर्यावरणीय अध्ययन के लक्ष्यों को हासिल करने के लिए हमें शायद लीक से हटकर कुछ नयी विषयवस्तुएं चुननी होंगी। कुछ नये माध्यम अपनाने होंगे। इन्हीं के साथ हमें हासिल होंगे

कुछ नए मूल्य, कुछ नयी अवधारणाएं और कुछ नये कौशल।

इसके लिए सबसे पहले तो हमें बच्चों की दुनिया में उतरना होगा। दोस्तों में, भाग–दौड़ में, जोड़–तोड़ और निर्माण में उनकी दिलचस्पी को समझना होगा। उनके विरोध, उनकी बातों, उनके अनुभव उनकी समझ तथा उनकी भाषा को सम्मान देना होगा। तभी हम चुन सकेंगे उनके लिए विषय। ये विषय क्या हो सकते हैं ? (यहां पाठ्यक्रम नहीं, सिर्फ संभावनाओं को इंगित किया गया है।)

- ❖ ये हो सकते हैं– बच्चों के अपने माता–पिता, भाई–बहिन, दोस्त, अध्यापक, उनके घर से स्कूल आने का रास्ता, वनस्पतियाँ, महकते फूल, लहराते तालाब, गुब्बारे वाला, चक्की वाली, रिक्शे वाला और बच्चों द्वारा झोले में इकट्ठा किया गया अटरम–शटरम।
- ❖ बच्चे गाँव में तरह–तरह के काम करते लोगों को देखते हैं।
- ❖ ये हो सकते हैं पड़ोस के लुहार चाचा, सामने वाला किसान, तीन घर पीछे वाले दुकानदार ताऊ, गली में झाड़ू लगाने वाले रामआसरे भैया, बाल काटने वाले जुम्मन दादा, फैक्टरी में नौकरी करने वाली बसन्ती दीदी आदि।
- ❖ ये हो सकते हैं उस इलाके के मेले, त्यौहार, रीति–रिवाज, खेतों को सींचने वाली नदियाँ और नहरें, लोगों को एक–दूसरे से मिलाने वाले गाँव–पड़ोस के रास्ते और सड़कें, टीले, जंगल, उनके सम्पर्क में आने वाली जानदार और बेजान चीजें।
- ❖ ये हो सकते हैं तरह–तरह के कृषि औजार – हल, फावड़ा, कुदाल, गेंती, ट्रैक्टर आदि और उनकी बनावट। आवाजाही के साधन – साइकिल, रिक्शा, तांगा, स्कूटर, बस आदि।
- ❖ ये हो सकते हैं – घर के उपकरण – चूल्हा, अँगीठी, चिमटा, पटा–बेलन, ताला–चाभी की बनावटें और नानी का चश्मा।
- ❖ ये हो सकते हैं उनके औजार–बक्स के औजार और स्कूल की विज्ञान किट के उपकरण – चाँदा, परकार, गुनिया, गेंद–छल्ला, चुम्बक, समतल दर्पण, लेन्स, कुचालक, सुचालक छड़ी आदि।
- ❖ इनमें शामिल हैं – हमारा गाँव, गाँव के प्रधान, पंचायत, विकास खण्ड, जिला, उनके लोगों का पहनावा, खान–पान, गीत, किस्से आदि।
- ❖ इनमें हैं – हमारा मंडल, हमारा प्रदेश, उसकी नदियाँ, पहाड़, बांध, फसलें, उद्योग, भाषा, रहन–सहन, उसके नेता–अधिकारी आदि।
- ❖ ये हो सकते हैं – गाँव का इतिहास, परिवारों का इतिहास।

इसके अलावा इनमें होना चाहिए – प्रसिद्ध लोगों के साथ साधारण आदमी का इतिहास। उसकी दोस्ती, प्यार, सुख–दुःख और इनके साथ जीने की उसकी कला और ताकत।

यदि अध्यापक सार्थक कोशिश करें तो प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों को स्थानीय इतिहास सिखा सकते हैं। बच्चे स्थानीय इतिहास से किसी हद तक पूर्व परिचित होते हैं और संदर्भों से खुद को जोड़ने में उन्हें सुविधा होती है।

पर्यावरणीय अध्ययन की विधियाँ

आखिर कैसे समझ पायेंगे बच्चे ये विषय ? शायद इसके लिए बेहतर रहेगा बीच–बीच में किताबों, प्रवचनों, उपदेशों और टोकाटाकी की पुरानी दुनिया से बाहर निकल आना।

शिक्षक और बच्चे जब भी मौका मिले स्कूल की दीवारों से बाहर झांकें। टहलें, बैठकर बातें करें, खेलने की सामग्री जमा करें, चित्र बनायें, गाने गायें और एक दूसरे से सवाल–जवाब करें।

वे कक्षा का नक्शा पहचानें, कक्षा के नक्शे में अपनी जगह पहचानें, स्कूल में अपना कमरा पहचानें और गाँव में अपना स्कूल।

वे गाँव का चक्कर तो लगाते ही होंगे। उसकी गलियों में घूमें – लौट कर लकड़ी से जमीन पर नक्शा खीचें, कक्षा में कागज पर उसे बनायें। उसमें दिखायें – सड़कें, मकान, जंगल, तालाब, नदियाँ आदि।

वे गाँव के बूढ़ों से मिलें। सुनें उनसे उस जमाने के किस्से जब मिला करता था एक आने में सेर भर घी और दो पैसे में घड़ा भर दूध।

वे आस–पास की उन टूटी–फूटी इमारतों के पास जायें जो कहती हैं कि ''हमारे दिन अब नहीं रहे। फिर भी हमारी देखभाल तो कर लिया करो दोस्तों।'' वे अपने इलाके के उन बहादुर और भले लोगों के नाम और किस्से जानें जो हमेशा दूसरों की मदद करते रहे।

वे अपने ब्लाक, जिले व प्रदेश में रहने वाले लोगों के तरह–तरह के जीवन के बारे में पढ़ें। उनकी तस्वीरें देंखें। इलाके, प्रदेश व देश के प्रसिद्ध लोगों की कहानियाँ सुनें–पढ़ें।

वे नक्शे देखें, ग्लोब घुमाएं, नाटक देखें–बनायें–खेलें, झूला झूलें, मैदान में पतंग उड़ायें, कबड्डियाँ–कुश्ती देखें–खेलें।

वे आल्हा सुनें। चैती, बिरहा, कजरी, रसिया, मालूसाई और न्यौली के बारे में मालूम करें। उन्हें सुनें–गायें। वे मिले हुए औजारों का इस्तेमाल करें। वस्तुओं को देखकर, जोड़–तोड़कर, उठाकर, चलाकर, घुमाकर तरह–तरह की क्रियायें करके नये–नये प्रयोग करें।

वे रिकार्ड रखें। माडलों, रेखाचित्रों, तस्वीरों, चार्टों, निबन्धों आदि के जरिये वे आस–पास की घटनाओं व अपने अनुभवों का लेखा–जोखा रखना सीखें। फुर्सत में वे सजें–संवरें भी। वे अपनी कक्षा, स्कूल व घर को जितना हो सके खूबसूरत बना दें।

पर्यावरणीय अध्ययन से बनते हैं मूल्य

एक ऐसे स्कूल में जहाँ बच्चे और शिक्षक कमरों से बाहर ताजी हवा में भी गतिविधियाँ चलाते हों, जहाँ बस्ते की किताबों के साथ पर्यावरण की खुली किताब से भी सीखने–सिखाने की कोशिशें होती हों, जहाँ लगातार पुरानी चीजों की पड़ताल हो और नई चीजों का जायजा लिया जाता हो, जहाँ बच्चे और शिक्षक मिलकर जुटे हों नई–नई चीजों के साथ प्रयोगों में –

वहीं बच्चों में पैदा होते हैं नये–नये मूल्य, घुमक्कड़ी का गुण, अवलोकन की क्षमता, खोज–बीन का चस्का, प्रयोग व विश्लेषण की आदत, निष्कर्ष निकालने की क्षमता। वहीं और सिर्फ वहीं पर्यावरण और समाज को बचाने की कोशिशों में भागीदार बनते हैं बच्चे।

सामग्री

शिक्षण सामग्री क्या/किसे मानेगें ?

एक लड़की गेंद साफ करके उसे ताक पर रख रही है ।

कुछ बच्चे गेंद से खेल रहे है ।

कुछ बच्चे पानी में गेंद डुबो कर देख रहे है कि गेंद डूबती है या तैरती है ।

सोचकर बतायें कि ऊपर की तीनों दशाओं में गेंद को क्या शैक्षणिक सामग्री मानेंगे और क्यों ?

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हम कुछ न कुछ सामग्री का उपयोग करते रहते हैं। सामग्री के बिना हम अपने कार्यों को करने में अधूरापन महसूस करते हैं। चलिये, हम सब मिलकर इस बात पर विचार करते हैं कि शिक्षण में सामग्री से हमारा क्या तात्पर्य है ?

सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को आसान बनाने वाली हर एक चीज शिक्षण सामग्री है ।

फूल	माचिस	घर
तालाब	पतंग	पंखा

ऊपर के बाक्स में दी हुई उस सामग्री को छांटिए जो शैक्षणिक सामग्री (सीखने सिखाने की सामग्री) के रूप में प्रयोग नहीं की जा सकती है। यह भी बताइये कि क्यों ? बच्चों को रूचिकर ढंग से ज्यादा सीखने में मदद कर हम इसकी उपयोगिता की जाँच कर सकते हैं। जिसे बच्चे स्वयं छू सकें, उनके साथ खेल सकें। उन्हें देखकर जिज्ञासु हो सकें, अन्तर्क्रिया कर सकें।

सामग्री के प्रकार

कक्षा में उपयोग, उपलब्धता और पहचान की दृष्टि से सामग्रियों को मोटे तौर पर कुछ श्रेणियों में बाँट सकते हैं –

सामग्री

- परिवेशीय सामग्री
- निर्मित सामग्री
  - शिक्षक द्वारा
  - बच्चों द्वारा
  - शिक्षक एवं बच्चों द्वारा
- विभाग द्वारा प्रदत्त (जैसे – ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड सामग्री)

कुछ सामग्रियाँ अस्थायी होती हैं जो उपयोग के दौरान समाप्त हो जाती हैं। कुछ सामग्रियां टिकाऊ, सस्ती और आसानी से उपलब्ध होने वाली होती हैं।

जुगाड़/निर्माण और उपयोग

प्रत्येक विद्यालय और उसके आस–पास, शिक्षण सामग्री तथा इसके निर्माण के लिए पर्याप्त मात्रा में साधन उपलब्ध हैं। जरूरत इस बात की है कि हम इन सामग्रियों को पहचानें और कक्षा शिक्षण में इनका भरपूर प्रयोग करें। उदाहरण के लिए – पत्तियाँ, कंकड़, पत्थर, पुराने कैलेण्डर आदि। यह जुगाडू किस्म की सामग्रियाँ हैं, जिन्हें हम अपने परिवेश से आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। इनके अलावा बच्चों के साथ मिलकर और भी अनेक सामग्रियों का निर्माण कर सकते हैं।

शिक्षकों द्वारा बनाई गई जटिल सामग्रियों से अधिक, बच्चों द्वारा बनाई गई सरल सामग्रियों का महत्व है। खुद बनाई हुई सामग्रियों से बच्चों का सहज लगाव रहता हैं और वे उसके रखरखाव का स्वयं ध्यान रखते हैं।

छात्रों के सहयोग से सामग्री को अधिक संख्या में तथा कई सेटों में तैयार किया जा सकता है। ऐसी सामग्री के निर्माण से भी बचें जिसमें खर्च तो कम, पर समय अधिक लग रहा है। बहुश्रेणी/बहुकक्षा शिक्षण को ध्यान में रखते हुए शिक्षण सामग्री का निर्माण किया जाना चाहिए। सामग्री ऐसी हो जिसे अलग कक्षाओं में अलग– अलग स्तर के बच्चे खुद प्रयोग कर सकें तथा इस सामग्री का अलग– अलग विषयों में भी उपयोग किया जा सके।

कक्षा में अक्सर सामग्रियों का प्रयोग इस डर से नहीं किया जाता है कि वे टूट–फूट जायेंगी। ये सामग्री हैं विभाग द्वारा दिये गये विज्ञान किट, गणित किट, आपरेशन ब्लैक बोर्ड की सामग्रियाँ, बच्चों के लिये दी गयी कहानी की किताबें आदि। परन्तु सामग्री की सही उपयोगिता तभी है जब वह बच्चों के हाथों में पहुँचे, और उनके द्वारा इस्तेमाल की जाये।

सोचिये –

- ❖ क्या यह सामग्री बक्सों में बंद रखने के लिये है ?
- ❖ क्या इसका हम स्वयं प्रयोग कर सकते हैं ?
- ❖ क्या इन सामग्रियों के प्रयोग के लिए और कुशलता की जरूरत है ?
- ❖ क्या आप डायट, एन. पी. आर. सी., बी. आर. सी., से मदद लेना चाहेंगे ?

निर्माण, उपयोग में सावधानी

- ❖ शिक्षण सामग्री बच्चों की रुचि/स्तर के अनुरूप हो और उनके वर्तमान स्तर को बढ़ाने के लिए चुनौती भी प्रस्तुत करे।
- ❖ केवल सूचना/विवरण देने वाली सामग्री रटने की आदत को बढ़ावा देती है । जैसे – चार्ट पर आपने खुद तथ्य और परिभाषाएं लिख दी। निश्चित रूप से यहाँ चार्ट सहायक सामग्री का काम कर रहा है, परन्तु इसमें बच्चे केवल रटने का काम करेंगे, इसमें सोचने, समझने और सक्रियता के लिए कोई जगह नहीं है।
- ❖ सामग्री आसानी से समझ में आने वाली हो तथा कक्षा मे सीखने की क्रियाओं को प्रोत्साहित करने वाली हो।

- ❖ शिक्षण सामग्री मात्र प्रदर्शन के लिए नहीं होनी चाहिए। क्रिया आधारित शिक्षण सामग्री ही अच्छी सामग्री है।
- ❖ सामग्री बच्चों के स्थानीय परिवेश और सामाजिक पृष्ठभूमि से जुड़ी हुई हो ।

भाषा/गणित/पर्यावरणीय अध्ययन में प्रयोग

सामग्री का भाषा, गणित एवं पर्यावरणीय अध्ययन में बहुत ही सरल ढंग से प्रयोग होता है। जैसे – भाषा में कहानी, कविताएं, गणित में कंकड़, पत्तियाँ, और पर्यावरणीय अध्ययन में अवलोकन प्रयोग/निरीक्षण के द्वारा कक्षा शिक्षण को रुचिकर बनाया जा सकता है।

कुछ सामग्री कक्षा में प्रयोग की जाती है और कुछ सामग्रियों का प्रयोग कक्षा से बाहर भी करते हैं। जैसे– यदि कोई बच्चा पीपल की पत्ती ले कर आता है तो हम उससे बाजा बना सकते हैं और फिर अवसर का लाभ लेते हुए इसे भाषा से जोड़कर कुछ इस तरह के प्रश्न कर सकते हैं :–

- ❖ पत्ती के माध्यम से बाजा तो हमने बना लिया अब बतायें कि इसकी आवाज कैसी है ? इससे मिलती–जुलती आवाज और किस वाद्ययंत्र की हो सकती है ? कितने तरह के बाजे होते हैं? वे कैसे बजते हैं ?
- ❖ यदि वाद्ययंत्र से सम्बन्धित पाठ्य–पुस्तक में कोई पाठ है तो उसकी चर्चा भी कर सकते हैं। इसके अलावा यदि बच्चे फूल लेकर आते हैं तो उससे हम क्या–क्या कर सकते हैं ? उस फूल से आयत, वर्ग, त्रिभुज, गोला व अन्य आकृतियाँ बना कर उनके बारे में समझ विकसित हो सकती है। इन फूलों के माध्यम से पर्यावरण को जोड़कर हम पेड़–पौधों से संबन्धित प्रश्न कर सकते हैं। इसके अलावा ऐसी बहुत सी परिवेशीय वस्तुएँ हैं जिनके साथ बच्चे खेलते रहते हैं। ये वस्तुएं बच्चों को उनके उपयोग, बनावट से संबन्धित जानकारियों के विषय में प्रत्यक्ष अनुभव कराने का सबसे अच्छा साधन हैं।

सामग्री, शिक्षण क्रिया में सहायक ही नहीं, अपितु अनिवार्य है।।

चित्र भी एक महत्वपूर्ण शिक्षण सामग्री है। उदाहरण के लिये– हमारे पास एक चित्र है जिसमें मछली पेड़ पर बैठी है या बारिश में मेंढक छाता लगाकर जा रहा है। इन चित्रों को देखने के बाद बच्चों की क्या प्रतिक्रिया होगी ? जरा सोचकर बतायें।

ऐसे चित्र बच्चों में कौतूहल, जिज्ञासा, और कल्पना शक्ति का विकास करने में सक्षम होते हैं। ऐसे चित्र अपने अटपटेपन के कारण बच्चों को अधिक आकर्षित करते हैं।

सामग्री की मदद से विषयवस्तु और सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को मजेदार और प्रभावशाली बना सकते हैं।

अध्यापक अनुदान

- ❖ डी.पी.ई.पी. की ओर से प्रत्येक अध्यापक को परियोजना में प्रतिवर्ष ५०० रु. शिक्षण सामग्री के निर्माण के लिए दिये जाते है।

- इस राशि के उपयोग के लिए अध्यापक स्वतंत्र एवं अधिकृत है।
- इस धन से स्थायी तथा अस्थायी दोनों प्रकार की सामग्री के सेट बनाये जा सकते हैं।
- कोशिश यह होनी चाहिए कि एक विद्यालय के कई शिक्षक अलग–अलग प्रकार की शिक्षण सामग्री बनायें और मिलकर उपयोग करें।
- सामग्री, बच्चों के उपयोग के लिए आसानी से उपलब्ध रहे।

सामग्री का रखरखाव

सामग्री का निर्माण/प्रयोग जितना महत्वपूर्ण है उतना ही आवश्यक है उसका उचित ढंग से रख–रखाव। इन्हें मटकों में, दफ्ती के डिब्बों में समूहीकरण करके रख सकते हैं। ये सामग्रियाँ बच्चों की पहुँच में हों ताकि आवश्यकता पड़ने पर वे आसानी से उनका प्रयोग कर सकें। इनके रखरखाव में बच्चों का भी सहयोग लेना बेहतर होगा, जिससे वे अपनी जिम्मेदारी का एहसास करें। साथ ही हमारा बोझ शिक्षक पर न पड़े।

शिक्षण सामग्री के कुछ उदाहरण

सामग्री	संभावित उपयोग
पतंग	वर्ग, त्रिभुज, आकृतियों का ज्ञान
सीटी	ध्वनि, कंपन
मुखौटे	कहानी, कविता, भाषा–ज्ञान
पाँसे का खेल	विपरीत शब्द, शब्द–अर्थ
कैलेण्डर	दिन–सप्ताह, जोड़ घटाना, सम–विषम
बीज	जोड़, घटाना
फ्लैश कार्ड्स	अनेक प्रयोग जैसे –वर्ण, गिनती, शब्द वाक्य पर्यावरणीय अध्ययन

आप भाषा गणित और पर्यावरणीय अध्ययन विषयों की पाठ्य–पुस्तकों को देखिए। दिये गये पाठों–दक्षताओं को सिखाने में किस तरह की सामग्री उपयोगी हो सकती है ? कृपया सूची बनाइयेः

अनजाने संदेश

सीखने–सिखाने की हमारी योजनाओं में बच्चों के लिए ढेरों सन्देश होते हैं। बच्चों पर इनके असर के बारे में हम लगभग जानते हैं पर कुछ ऐसे संदेश भी हैं **जो हमारे स्कूल के माहौल, अध्यापक के व्यवहार, बोल–चाल, चाल–ढाल, और हाव–भाव में मौजूद तो होते हैं पर अध्यापक को उनका आभास नहीं होता है।**

जगह–जगह पर ये अनकहे सन्देश बीमारी के अदृश्य बैक्टीरिया की तरह छिपे होते हैं और मौका पाते ही बच्चों पर हमला कर देते हैं। आइये ! कुछ स्थितियों को सामने रखकर जरा इन सन्देशों को देखने/भांपने की कोशिश करें।

यह एक स्कूल की कक्षा है। इसमें एक कुर्सी, एक मेज, एक बक्सा, कुछ किताबें, एक घंटी–हथौड़ी, कुछ चित्र, चार्ट व नक्शे हैं। दीवार पर एक चार्ट एक कोने में तिरछा लटका है। यह एक धब्बेदार पतंग सा लगता है। भारत व उत्तर प्रदेश के नक्शे तथा कुछ अन्य चार्ट बक्से पर रखे हैं। उन पर धूल की पर्त जमी है।

बच्चे अक्सर इस कक्षा के दृश्य के बीच निश्चिंत होकर बैठे गुरु जी को देखते है। पर गुरु जी ने अभी इस कक्षा को ठीक और व्यवस्थित करने के बारे में नहीं सोचा है।

यह एक अन्य स्कूल का दृश्य है। इसकी सभी कक्षाओं में टाटपट्टियों पर बच्चे एक दूसरे की ओर पीठ करके बैठे हैं। हर कक्षा में लड़कियों की लाइन अलग और लड़कों की अलग लगती है। अपने गाँव/घर में तो लड़के–लड़कियाँ साथ–साथ उठते, बैठते और खेलते हैं पर स्कूल में मास्साब उन्हें हमेशा अलग–अलग बिठाते हैं। यह बात लड़के–लड़कियों को अजीब और अटपटी लगती है, स्कूल में सभी कक्षाओं में मानीटर लड़के ही है। लड़कियाँ भी मानीटर बनना चाहती हैं पर मास्साब ने कभी उनकी भावनाओं एवं क्षमताओं को जानने/समझने की कोशिश ही नहीं की।

एक और स्कूल है, यहाँ कक्षा ५ में मास्साब गणित पढ़ाने के लिये मशहूर है। दूर–दूर तक लोग उनके गणित ज्ञान का लोहा मानते हैं। पता नहीं वे लड़कियों को क्यों गणित सीखने–सिखाने लायक नहीं मानते। गलतियाँ करने पर वे लड़कियों से यह कहना नहीं भूलते कि "तुम तो लड़कियाँ हो, गणित तुम्हारे बस का नहीं है वैसे भी गणित लड़कियों का विषय है ही नहीं।" इस पर लड़कियाँ सहम–सिकुड़ कर रह जाती है। इन गुरु जी की एक और खूबी है कि वे कक्षा में होशियार बच्चों को आगे बिठाते हैं और कमजोर को पीछे। साल भर होशियार आगे और कमजोर पीछे ही बैठते हैं। देखने वाली बात यह है कि ये कमजोर बच्चे पिछली कई कक्षाओं से कमजोर ही चले आ रहे हैं। मास्साब के इस नज़रिये से लड़कियों और कमजोर बच्चों के मन में जो हीन भावना आ जाती है उसका शायद उन्हें तनिक भी अनुमान नहीं है।

इसी प्रकार के कुछ और स्कूल भी है।

कहीं–कहीं बिना गणवेश के आने वाले बच्चों को स्कूल से वापस जाना पड़ता है। कहीं–कहीं स्कूलों में एक खास जाति के बच्च.ों की लाइन ही अलग लगाई जाती है। स्कूल में खाने–पीने संबधी कार्यों से उन्हें अलग रखा जाता है। विकलांग बच्चों को डांटने के समय कह दिया जाता है कि दूसरी टाँग भी तोड़ूँ क्या ?

किसी स्कूल में अध्यापकों में आपस में बड़ा विवाद रहता है और वह बच्चों के सामने ही तेज–तीखी आवाज़ में अपने कड़वे विवाद सुलझाने की कोशिश करते हैं।

एक मास्साब किताबों की हिफाजत पर जोर देते हैं। किताब की जिल्द पर, किताब के कोने–कोने में, चित्र बनाने या मनपसंद लिख देने पर या गणित की कापी में कुत्ता–बिल्ली बना देने पर बच्चों को खासी डाँट पड़ती है, बच्चों का बस चले तो वे इन बेरंग और नीरस किताबों में अपनी मनपसंद रेखाएं खींचे। कोई कहानी लिखें। इनमें रंगबिरंगे चित्र बना दें।

कक्षा में शिक्षक का व्यवहार जिस तरह अनजाने संदेशों को प्रसारित करता है, वैसे ही कक्षा में प्रयोग की जा रही सामग्री (पाठ्य पुस्तकें एवं अन्य पुस्तकें) भी बच्चों में अनजाने में ही अनेक संदेश देती हैं। जैसे –

हमारी किताबों में बने चित्रों में लड़कियों को प्रायः झाड़ू लगाते, खाना पकाते, बच्चे खिलाते आदि पारम्परिक कार्य करते दिखाया जाता है।

क्या आप विभिन्न विद्यालयों के इन नमूनों से संतुष्ट हैं ? सामग्री पर दिये गये इन उदाहरणों से संतुष्ट हैं ? क्या ये शैक्षिक स्थितियाँ/सामग्रियाँ बच्चों के अनुकूल हैं ? अगर नहीं तो क्या अब एक ऐसे विद्यालय की कल्पना कर सकते हैं जहाँ इस तरह की ऊलजलूल बातों के लिये कोई जगह न हो ? जहाँ बच्चों को ऐसे अनचाहे संदेशों का अदृश्य जहर न दिया जाता हो।

> बच्चे सीखने में गलतियाँ करते हैं। यह बहुत स्वाभाविक है। लकिन कुछ बच्चों को कहा जाता है "तुम्हारे बाप दादा ने भी पढ़ा है कि तुम ही पढ़ोगे ! "जाओ, जाकर बैल की पूँछ मरोड़ो।"

यह भी विचार कीजिये कि क्या हमारी कक्षा में सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में, या हमारे व्यवहार, तौर–तरीकों या कक्षा में प्रयोग की जाने वाली सामग्री में कुछ ऐसे ही संदेश बच्चों तक तो नहीं पहुँच रहे है ? इस नज़र से इन चीज़ों को हमने पहले कभी देखा भी तो नहीं है। अतः जरूरत है कि पलट कर देख लें कि कहीं ऐसी ही चूक अनजाने में हमसे भी तो नहीं हो रही है। इस बारे में आपके लिये सतर्कता जरूरी है। शायद ऐसा आप स्वयं भी महसूस कर रहे होंगे।

खोजें और अपनी कक्षा में ऐसे अनचाहे संदेशों को नोट करें ....

इन संदेशों को दूर करने के सकारात्मक उपाय क्या होंगे ? नोट कर लीजिये

शायद आगे चलकर कभी ये बातें काम की साबित हों।

मूल्यांकन

मूल्यांकन क्या ?

हम जब किसी कार्य को करते हैं तो अपेक्षा यह होती है कि परिणाम सुखद हो। हमें अपने कार्य की प्रगति व अवनति का पता तब चलता है जब हम उस कार्य से पहले की स्थिति एवं उस कार्य के बाद की स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं। यह तुलनात्मक अध्ययन ही हमारे द्वारा किये गये कार्यों का मूल्यांकन है।

मूल्यांकन क्यों ?

यदि आप थोड़ा सा भी सोचें तो आप पायेंगे कि मानव किसी न किसी रूप में अपना मूल्यांकन करता आया है और उस मूल्यांकन के आधार पर अपनी जीवन–दिशा को निर्देशित करता आया है। हम यह भी जानते हैं कि एक गलत मूल्यांकन किसी के भी जीवन को बुरी तरह प्रभावित कर सकता है। फिर जब बच्चों की बात हो तो यह अति आवश्यक है कि उनका मूल्यांकन सोच समझकर, कई अन्य महत्वपूर्ण बिन्दुओं को ध्यान में रखकर किया जाये क्योंकि आपके और हमारे द्वारा किया गया बच्चों का मूल्यांकन, बच्चों की जीवन–दिशा को बदलने की क्षमता रखता है।

मूल्यांकन का वर्तमान स्वरूप

तो चलिये बात की शुरुआत करते हैं आपके विद्यालय से। यह बताइये कि आपके विद्यालय में बच्चों का मूल्यांकन करने में कौन–कौन से तरीके अपनाये जाते हैं ? कृपया लिखिए ....

....

....

....

....

यह साफ है कि सबसे पहले आपके मस्तिष्क में उत्तर आया होगा परीक्षा, या यूँ कहें कि लिखित परीक्षा। परन्तु क्या आप लिखित परीक्षा के अलावा भी कोई और तरीका बच्चों के मूल्यांकन करने का बता सकते हैं ? कृपया सोचें ?

चलिये अब अतीत में झाँक कर विद्यालय के दिनों को याद करते हैं। याद करें वह दिन जब आपकी परीक्षाएं शुरु होने वाली थीं तब आपको 'परीक्षा' के नाम से डराया या धमकाया जाता था यह कह कर –

- ❖ सारा दिन खेलते रहते हो ! अब पढ़ना शुरु कर दो, परीक्षा सिर पर है।
- ❖ अगर अच्छे नम्बर नहीं लाये तो देखना।
- ❖ अपने कलम, पेन्सिल, दवात नये खरीद लेना और दो–दो पास में रखना।
- ❖ तू तो कभी पास ही नहीं हो सकता, देख लेना दोबारा इसी क्लास में पढ़ेगा, छोटे–छोटे बच्चों के साथ।

अरे भई परीक्षा न हुई आफत हुई। हो सकता है यह आपके साथ न हुआ हो परन्तु यह तो मानना ही पड़ेगा कि हममें से ज्यादातार 'परीक्षा' के नाम से ही घबराते थे। यही आज तक होता आ रहा है। ऐसा क्यों है कि परीक्षा एक असाधारण घटना बना दी जाती है ? जरा सोचें कि यह परीक्षा क्या है।

❖ केवल शैक्षिक पक्ष के लिए ही है ?
❖ केवल सामूहिक ही हो सकती है ?
❖ या कुछ और ?

कृपया अपने विचार पांच लाइनों में लिखें ....

....

....

....

....खैर!किसी तरह परीक्षा तो हो गई। अब 'परिणाम' घोषित किए जायेंगे –

तुम्हारे गणित में – .... अंक !

हिन्दी में – .... अंक !

अब वह बच्चा क्या करे ! मेहनत तो उसने खूब की थी। दिल लगाकर पढ़ा भी था। खेलने भी नहीं जाता था। फिर ऐसा क्या हुआ था कि कम अंक आए ?

❖ क्या आपने कभी सोचा कि साल भर तक आप जिस बच्चे को मेधावी या तेज बालक समझते रहे वह परीक्षा के अंकों में पिछड़ कैसे गया ?
❖ क्या यह जरूरी नहीं कि हम यह जानें कि परीक्षा के समय उस बालक की मानसिक स्थिति क्या रही होगी?
❖ क्या आपने कभी यह समझने की कोशिश की ? सभी बच्चों को एक तरह से समझाने व पढ़ने की सामग्री देने पर भी बच्चे एक तरह से क्यों नहीं सोचते/समझते ?
❖ क्यों सभी बच्चों का एक ही कार्य को करने का ढंग अलग–अलग होता है?

सोचने की बात ?

❖ क्या केवल सत्र के अन्त की परीक्षा ही बालक की सही पहचान है?
❖ क्या शैक्षिक पक्ष के अलावा भी बहुत कुछ है जो परीक्षा में सम्मिलित किया जा सकता है?
❖ क्या सिर्फ 'परिणाम' से बालक के व्यक्तित्व को मापना उचित है?

तो फिर ऐसा क्या किया जाये कि शैक्षिक पक्ष के अलावा बच्चों के साहस, सहयोग, संवेदनशीलता, कल्पनाशीलता, तार्किकता आदि पहलुओं का भी आंकलन कर परिणाम घोषित किया जाये। कृपया बतायें कि क्या इन सारे पहलुओं का आकलन वर्तमान की परीक्षा प्रणाली से भली भांति होता है ? नहीं। तो फिर क्या परीक्षायें खत्म कर देनी चाहिए ? ऐसा तो फिलहाल संभव नहीं, परंतु यह संभव अवश्य है कि हम परीक्षा प्रणाली को एक ऐसा रूप प्रदान करें जिससे बच्चों के व्यक्तित्व के सभी पहलुओं का आंकलन सहजता से किया जा सके।

मूल्यांकन किसका ?

अभी तक हमने जो भी बात कही वह बच्चों के इर्द–गिर्द ही रही है। परन्तु यह विचारणीय है कि क्या वास्तव में मूल्यांकन सिर्फ बच्चों का ही होता है? आप अपने दिन याद करें। आप को सिर्फ एक–दो शिक्षक ही क्यों पसन्द आते थे और उन शिक्षकों द्वारा पढ़ाए गए विषयों में आप अव्वल आते थे परन्तु अन्य विषयों में उतने अच्छे नहीं थे। इससे कम से कम यह तो पता चलता है कि कमजोर आप नहीं थे परन्तु कहीं न कहीं गड़बड़ी तो हुई, पर कहाँ ? कैसे ? क्या दोष शिक्षक में था या शिक्षक द्वारा अपनाई गई शिक्षण पद्धति का या मूल्यांकन करने वाली विधि का या कहीं और ?

दोस्ती की सजा

"मैं कक्षा दो में पढ़ता था। एक दिन मास्साब शब्दार्थ पूछ रहे थे। कई बच्चों से उन्होंने पूछा, कोई भी सही जवाब नहीं दे पा रहा था। ऐसे सब बच्चों को कक्षा में खड़ा कर दिया गया। मेरी भी बारी आई। मैंने सही जवाब दिया। अब मुझसे कहा गया कि जो सही नहीं बता पाये हैं उन्हें दो–दो थप्पड़ मारो। कक्षा के सभी बच्चों से मेरी अच्छी दोस्ती थी। मैंने उन्हें मारने से इनकार कर दिया। फिर क्या था। गुरुजी मुझपर बरस पड़े। न बताने वालों को माफ कर दिया गया और दोस्तों को न पीटने के अपराध में मेरी जम कर पिटाई की गई।"

(एक अध्यापक के संस्मरण)

कैसे ?

तो अब प्रश्न यह है कि मूल्यांकन किया जाये तो कैसे ? यह हम मान चुके हैं शैक्षिक मूल्यांकन के अलावा व्यक्तित्व के अन्य पहलुओं का भी मूल्यांकन अवश्य होना चाहिये और वह भी बच्चों को बिना बताये। इसके लिये यह जरूरी है कि बालक का पूरे वर्ष कक्षा में, विद्यालय में अवलोकन होता रहे, उससे बातचीत करते रहें, उसके आसपास के परिवेश को समझें और मूल्यांकन में इन सभी बातों को लिखित परीक्षा के साथ–साथ ध्यान रखा जाय।

ऐसा भी हो सकता है कि मूल्यांकन के लिए उन गतिविधियों को करवाया जाए तो कक्षा में पहले करवायी जा चुकी हों जैसे –

❖ बच्चे से कहलवाई जाने वाली कहानी।
❖ कोई अभियान गीत/ या कोई सामग्री निर्मित करने वाली गतिविधि इत्यादि।

कृपया आप भी बतायें –

....

....

....

इन गतिविधियों में आप पायेंगे कि बच्चे की कल्पना शक्ति व रचनात्मक शक्ति का परिचय मिल रहा है। साथ ही साथ बच्चों की झिझक दूर हो रही है। आप चाहें तो इन गतिविधियों से सम्बन्धित लिखित कार्य भी करवा सकते हैं और आप पायेंगे कि वही बच्चे कितनी सहजता एवं सुचारू रूप से कार्य को सही दिशा में करते हैं जिसके लिए आपने कल्पना भी नहीं की थी।

रिकार्ड

जब हम बात करते हैं कि 'रिजल्ट' को बच्चों के व्यक्तित्व पर न थोंपे, केवल इसी के आधार पर बच्चों को पास–फेल न करें बल्कि सम्पूर्ण मूल्यांकन को इसके साथ जोड़ें, तब इस सम्पूर्ण मूल्यांकन का रिकार्ड रखना जरूरी हो जाता है। यही रिकार्ड हमारी बच्चे के बारे में समझ विकसित करता है और भविष्य के कार्यों के बारे में दिशा बताने के लिए निष्कर्ष प्रदान करता है। आप अपना रिकार्ड कैसे और किस प्रकार का रखना चाहेंगे ?

- ❖ नम्बर देकर ?
- ❖ श्रेणीबद्ध करके ?
- ❖ या कोई और तरीका ?
- ❖ विकसित एवं अविकसित दक्षताओं का रिकार्ड रखा जाए।

विश्लेषण

इस रिकार्ड को रखकर हम इसको समय–समय पर अच्छी तरह पढ़ सकेंगे। इसके आधार पर यह ध्यान रखा जा सकता है कि बच्चे का प्रदर्शन पहले की अपेक्षा अब कैसा है। प्रदर्शन के समय वह किस मानसिक दशा में था। उसे निर्देश स्पष्ट हुए थे या नहीं।

योजना

यह गम्भीर तथा विस्तृत विश्लेषण ही निर्णय देने का आधार बन जायेगा कि वास्तव में बच्चा कितना सीख पाया। अगर कम सीखा तो क्यों और पूरा सीख गया तो कैसे।

मूल्यांकन सम्बन्धी कुछ खास बिन्दु निम्नवत् हैं –

- ❖ मूल्यांकन से निकली हर एक जानकारी का उपयोग करें।
- ❖ बच्चों को आपस में भी एक दूसरे का मूल्यांकन करने का अवसर दिया जाए।
- ❖ शिक्षक अपने/अन्य विद्यालय के शिक्षकों के साथ बैठकर स्वयं का मूल्यांकन करें।
- ❖ मूल्यांकन बच्चों में एक कौशल के बाद दूसरा कौशल विकसित करने में सहायक हो।
    १. मूल्यांकन भी पाठ्यक्रम का एक हिस्सा है, इसे उभारना आवश्यक है।
    २. मूल्यांकन बच्चों में डर पैदा करने वाला न हो, वरन् इसे वे खुशी–खुशी स्वीकार कर लें। इसके लिए आवश्यक है कि इसे पूर्ण एवं रोचक बनाया जाय।
    ३. प्रारम्भ में ही यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि मूल्यांकन (परीक्षा) केवल बच्चों का ही नहीं होता वरन् बच्चों द्वारा शिक्षकों का भी होता है। इसी प्रकार समुदाय द्वारा भी शिक्षकों, बच्चों की उपलब्धियों तथा स्कूल का समग्र मूल्यांकन किया जाता है।

विद्यालय विकास

वर्तमान स्थिति

हम सबने अनुभव किया होगा कि सभी विद्यालयों की उपलब्धियां एक जैसी नहीं हैं। उपलब्धियों में असमानता के अनेक कारण हो सकते हैं। जैसे – विद्यालय के भौतिक संसाधन, मानवीय संसाधन, विद्यालय व समुदाय और ग्राम शिक्षा समितियों के बीच आपसी संबंध। हमने यह भी देखा होगा कि उपयुक्त सुविधाओं की समानता होते हुए भी उपलब्धि समान नहीं होती हैं। कहीं–कहीं शिक्षकों की कमी होने पर भी कुछ विद्यालय अपना बाहरी और आन्तरिक स्वरूप खूबसूरत बनाये हुए हैं। उन विद्यालयों में सीखने–सिखाने की प्रक्रिया सुचारु रूप से चल रही है। ग्राम शिक्षा समिति, समुदाय एवं बच्चों का पूर्ण सहयोग भी विद्यालय को मिल रहा है और जहाँ अधिक शिक्षक हैं, पर्याप्त संसाधन उपलब्ध हैं वहाँ प्रगति का कोई कार्य नहीं हो रहा।

आइये, हम अपने आसपास के विद्यालयों को जरा पास से देखें। क्या हम इन्हें कहीं इन रूपों में तो नहीं पाते ?

विद्यालय में है :	**–**	**विद्यालय की**
अधिक संसाधन	–	अधिक उपलब्धि
कम संसाधन	–	कम उपलब्धि
अधिक संसाधन	–	कम उपलब्धि
कम संसाधन	–	अधिक उपलब्धि

ऐसा क्यों है ?

विद्यालय विकास क्या और कैसे ?

क्या विद्यालय में भौतिक संसाधनों के जमावड़े को ही विद्यालय विकास माना जा सकता है ?

आज के वातावरण में भौतिक संसाधनों से भरे पूरे विद्यालय हम विकसित विद्यालय कई जगह माना जाता है। लेकिन कक्षा के भीतर और बाहर होने वाली गतिविधियाँ भी असली विद्यालय विकास की सूचक हैं।

❖ कक्षा के भीतर बच्चों का दूसरे बच्चों के साथ आपसी सम्बन्ध, बच्चों का शिक्षक के साथ सम्बन्ध एवं शिक्षकों का आपस में सम्बन्ध भी विद्यालय विकास को बहुत गहराई तक प्रभावित करता है।

❖ कक्षा शिक्षण के पूर्व, योजना बनाना और उसके अनुसार सहायक सामग्री का प्रयोग, छोटे–बड़े समूहों में गतिविधि को कराना, निष्कर्ष निकालने में सबकी भागीदारी कराना एवं सहायक शिक्षण सामग्री का उचित रखरखाव भी विद्यालय विकास के जरूरी हिस्से हैं।

❖ बहुकक्षा और बहुस्तरीय शिक्षण की स्थिति में सीखने–सिखाने की योजना बनाना और उसे बच्चों की मदद सहित अन्य उपायों द्वारा प्रभावी तरीके से लागू करना विद्यालय विकास का

महत्वपूर्ण भाग है क्योंकि हमारे प्रदेश के अधिकांश प्राथमिक विद्यालयों में बहुकक्षा/बहुस्तरीय शिक्षण की स्थिति है।

> कक्षा १ और २ के छात्र क्या और कैसे करना है; पाठ्यपुस्तक के आधार पर इसे नहीं कर पाते हैं। इन बच्चों के साथ क्या करना है इसकी योजना बनाने और इसे समझाने में जितना आसान लगता है, कार्यरूप में परिणत कर पाना उतना ही कठिन साबित हुआ। बच्चों को यह समझा देने पर कि वे क्या करने जा रहे हैं, पहले तो लगता है कि वे तत्काल सब समझ गये। लेकिन अंत तक पहुँचते–पहुँचते सब भूल–भाल जाते थे, काफी गड़बड़ करते थे। कभी–कभी इतना गुस्सा आता है कि क्या बताऊँ।
>
> **एक शिक्षक के अनुभव खैराबाद, सीतापुर**

❖ ग्राम शिक्षा समिति के साथ विद्यालय विकास की व्यापक योजना बनाते समय गाँव की ज्वलंत समस्याओं पर विचार और विद्यालयों पर उसके प्रभाव पर ध्यान देना, जिससे समुदाय विद्यालय से सीधे जुड़ सके।

कौन करेगा परिवर्तन ?

बच्चे और शिक्षक –

विद्यालय में होने वाले किसी भी परिवर्तन से बच्चे और अध्यापक सीधे जुड़े होते हैं। इस काम में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। उनके बीच के आपसी सम्बन्ध और बातचीत से पैदा हुई समझदारी से बदलाव की प्रक्रिया तेज की जा सकती है।

हमने महसूस किया होगा कि बच्चों के साथ बातचीत करके तय की गई योजनायें आसानी से सहज रूप से पूरी हो जाती हैं। जैसे – खेल का मैदान, कक्षा के भीतर की सजावट और व्यवस्था, विद्यालय परिसर की सफाई/सजावट। विद्यालय में पढ़ने वाले बच्चों की बालसभा बने, जिसकी कार्य योजना हो। विद्यालय की जरूरतों के अनुसार इसका ढाँचा लचीला हो। छोटे–बड़े बच्चे आपस में जिम्मेदारियों का बँटवारा कर सकते हैं। जैसे – राष्ट्रीय पर्वों पर सांस्कृतिक कार्यक्रम, खेलकूद प्रतियोगितायें, साप्ताहिक सफाई/सजावट के कार्यक्रम, वाचनालय एवं पुस्तकालय का संचालन, भित्ति–अखबार तैयार करना, विद्यालय/गाँव में खोजबीन कर छोटे से संग्रहालय की व्यवस्था (इसमें बीजों, टिकटों, माचिसों आदि–आदि का संकलन)।

> गाँव मंझरिया, जिला गोरखपुर। 'ग्राम शिक्षा समिति' के एक सदस्य हैं श्री हरगुन प्रसाद। इनकी दोनों बच्चियाँ गाँव के प्राइमरी स्कूल में पढ़ती हैं। स्कूल के बच्चों की छात्रवृत्ति का पैसा प्रसाद जी के हस्ताक्षर से निकलता है। पहले वे अंगूठा निशान लगाते थे और इसे प्रमाणित कराने के लिये उन्हें खुद बैंक जाना पड़ता था जिससे उनकी एक दिन की मजदूरी–पचास रुपये का नुकसान होता था। समस्या यह थी कि इसकी भरपाई कैसे हो। बच्चियों ने अपने पिता को साक्षर बनाया और दस्तखत करना सिखाया। अब वे 'विड्राअल फार्म' पर दस्तखत बना देते हैं, छात्रवृत्ति का पैसा प्रधानाध्यापक निकाल कर ले आते हैं और बच्चों में वितरित कर देते हैं।

शिक्षक और समुदाय

क्या शिक्षक और समुदाय के बीच ऐसे सम्बन्ध हैं कि विद्यालय विकास में समुदाय अपनी ओर से पहल करें ?

शायद हाँ, शायद नहीं। आप क्या सोचते हैं ? इस तालमेल की जितनी जरूरत आज है शायद उतनी पहले कभी न थी।

क्या आपने अपनी ओर से इस दिशा में कोई पहल की ? ऐसी पहल की जरूरत लगातार रहेगी। जैसे–समुदाय के सुख–दुःख में भागीदारी करना, अभिभावकों से बच्चों की प्रगति तथा समस्याओं पर बातचीत करना। ग्राम शिक्षा समिति के साथ–साथ विद्यालयी कार्यक्रमों में समुदाय की भागीदारी बढ़ाने में अपनी ओर से पहल करना। ग्राम शिक्षा समिति के सदस्यों एवं गाँव के उत्साही व्यक्तियों से व्यक्तिगत सम्पर्क कर विकास सम्बन्धी चर्चा करना और सहयोग लेना।

शिक्षक और विभाग

विद्यालय विकास के बारे में विभाग से आपकी क्या अपेक्षायें हैं? क्या उनकी समय पर पूर्ति हो पाती है ? क्या आप यह मानते हैं कि विकास के लिए विभाग ही जिम्मेदार है अथवा कुछ हद तक आप खुद भी ? हम अपनी जिम्मेदारी का निर्वाह कहाँ तक कर पा रहे हैं ? आखिर विभाग हमें क्या–क्या दे सकता है और कितना ?

विभाग, विद्यालय से सम्बन्धित कुछ सीमित मात्रा में भौतिक संसाधन ही तो दे सकता है, कक्षा की आन्तरिक गतिविधि तो नहीं।

क्या हमें इन प्रश्नों पर विचार की जरूरत नहीं है ? निश्चित ही हमारे मत अलग–अलग हो सकते हैं लेकिन यह मानी हुई बात है कि हम अपनी जिम्मेदारियों से मुकर नहीं सकते ?

विद्यालय विकास : कुछ कसौटियाँ

- ❖ क्या हमने अभिभावकों की इच्छा जानने की कोशिश की है ?
- ❖ क्या हमारे विद्यालय अभिभावकों की आशाओं/अपेक्षाओं को पूरा करते हैं ?
- ❖ क्या हमारे पाठ्यक्रम में स्थानीय ज्ञान का उपयोग किया गया है ?
- ❖ क्या पाठ्यक्रम निर्माण में अभिभावकों/समुदाय की भागीदारी हो सकती है ?
- ❖ क्या शिक्षक और अभिभावक साथ मिलकर बच्चों की शिक्षा के बारे में सोचते हैं ?
- ❖ क्या विद्यालय अभिभावकों की इच्छा के अनुरूप बच्चों को विकसित होने में मदद करते हैं ?
- ❖ क्या विभागीय अधिकारियों से पर्याप्त दिशा निर्देशन एवं सहयोग प्राप्त होता है ?

आपके विचार : अपने विद्यालय के बारे में –

————————————————————————————————

————————————————————————————————

————————————————————————————————

समेकित शिक्षा

आपने देखा होगा कि कुछ बच्चे नियमित स्कूल पढ़ने जाते हैं, कुछ का स्कूल में मन नहीं लगता। कुछ बच्चे ऐसे भी होते हैं जो पढ़ने की इच्छा रखते हुए भी घरवालों या साथियों द्वारा अपमानित किये जाने के कारण स्कूल नहीं जाते हैं। हो सकता है कि उन्हें चलने–फिरने में परेशानी हो, लिखने में अंगुलियां ठीक से काम न करती हों, कम दिखाई देता हो या कम सुनायी देता हो।

जरा सोचिये, ये बच्चे कौन हैं ? इनकी अतिरिक्त आवश्यकताएं क्या हैं ? इनकी हम किस प्रकार मदद कर सकते हैं? ये विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे हैं। जिन्हें सामान्य रूप से अक्षम / विकलांग बच्चे कहा जाता है। जिनमें निम्नांकित अक्षमतायें / विकलांगता सम्भावित हैं –

१. श्रवण संबंधी अक्षमता

२. दृष्टि संबंधी अक्षमता

३. अस्थि संबंधी अक्षमता

४. मानसिक मन्दता

५. सीखने से संबंधित अक्षमता

इन अक्षमताओं की निम्न श्रेणियाँ हो सकती हैं :

१. अल्प २. मध्यम एवं ३. गम्भीर श्रेणी

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्यों में प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण है और इस लक्ष्य की पूर्ति के लिये ५ से १०% उन बच्चों को जो शारीरिक या मानसिक रूप से अक्षम हैं को स्कूल लाना होगा। जो कि **समेकित शिक्षा** का मुख्य लक्ष्य है। **समेकित शिक्षा से तात्पर्य है कि कम और मध्यम श्रेणी के विकलांग बच्चों को न्यूनतम रोधक वातावरण प्रदान कर सामान्य विद्यालयों में प्रवेश कराना** ताकि वे कक्षा के अन्य बच्चों की तरह उन्नति करें तथा उनका समुचित विकास हो। अधिकांश अध्यापकों का विश्वास है कि सभी विकलांग बच्चों की शिक्षा के लिए विशेष प्रकार की तकनीकी की आवश्यकता होती है, यह सच नहीं है। कम और मध्यम श्रेणी के विकलांग बच्चों को पढ़ाने के लिए किसी विशेष तकनीक की आवश्कता नहीं होती। **विशेष तकनीक की आवश्यकता उन बच्चों के लिए होती है जिनकी विकलांगता गंभीर श्रेणी की हो।**

अध्यापक बच्चों के व्यवहार, विभिन्न विकलांगताओं से संबंधित चैकलिस्ट की सहायता से विकलांग बच्चों को चिन्हित करें। विकलांगता / अक्षमताओं से ग्रस्त तथा सामान्य बच्चों को एक साथ पढ़ाते समय अक्षमताओं से ग्रस्त बच्चों की आवश्यकता को विशेष ध्यान में रखना होगा कि आप अथवा अन्य बच्चे अनजाने में ऐसी कोई बात न कहें या करें जो ऐसे बच्चों को दुख पहुंचाती हो। आवश्यक होगा कि सभी बच्चे इन बच्चों से मैत्रीपूर्ण व्यवहार करें। विभिन्न अक्षमताओं वाले बच्चों को खेलकूद, नाटक, संगीत एवं प्रार्थना सभी में प्रतिभाग करने के लिए उत्साहित करना होगा।

अध्यापक को निम्न बातें विशेष रूप में ध्यान में रखना होगा :

१. दृष्टि एवं श्रवण विकलांगता से ग्रस्त बच्चे को कक्षा में आगे बैठाने की व्यवस्था।
२. पढ़ाते समय बच्चों को शब्दों को जोर से बोलकर तथा बड़े अक्षरों में स्पष्ट लिखना।
३. नक्शा, ग्लोब, फ्लैश–कार्ड्स तथा अन्य शिक्षण–अधिगम सामग्री का प्रयोग।
४. बच्चों को चश्मा/हियरिंग एड के प्रयोग के प्रति प्रोत्साहन।
५. अस्थि विकलांगता वाले बच्चों को पर्याप्त समय दिया जाना।
६. हाथ से विकलांग बच्चों को अपेक्षाकृत कम गृह–कार्य दिया जाना।
७. मानसिक रूप से अक्षम बच्चों को कई बार निर्देश देकर बार–बार अभ्यास के अवसर।
८. सीखने की दृष्टि से अक्षम बच्चों को पाठ्यवस्तु को छोटी–छोटी इकाइयों में विभक्त कर पढ़ाना।
९. आपके इलाके में यदि कोई संस्था अथवा कोई व्यक्ति विकलांगता के क्षेत्र में कार्य कर रहा हो तो उसे अपने विद्यालय में बुलायें तथा उससे बच्चों के सम्मुख अपने अनुभव सुनाने को कहें, मदद लें।

आपके स्कूल में ऐसे बच्चे बच्चियों की जरूरतों पर आपकी दृष्टि होनी चाहिए। आपका प्रोत्साहन इन बच्चों को स्कूल में बनाये रखने में बहुत मदद करता है।

आपके थोड़े से सहयोग से बच्चा शिक्षा की दिशा में आगे बढ़ सकता है।

क्या आप जानते हैं ?

विकलांगता की दृष्टि से :

१. पूर्णतः दृष्टिहीन बच्चे संख्या में सबसे कम होते हैं दृष्टिबाधित अधिकतर बच्चे ग्लास लेन्स/चश्में की सहायता से देखने में सक्षम बनाये जा सकते हैं।
२. श्रवण–बाधित बच्चों की संख्या अधिक/आंशिक श्रवण बाधित बच्चे "सुनने की मशीन" की सहायता से सुन सकते हैं।
३. शारीरिक रुप से अक्षम बच्चों की संख्या सबसे अधिक। इनमें से अधिकांश के लिए "विशेष उपकरण" सहायक।
४. १९९१ की जनगणना के अनुसार ३ प्रतिशत बच्चों में मानसिक मन्दता के कारण विकास दर से।
५. कक्षा एक एवं दो में मानसिक मंद बच्चों की पहचान परीक्षायें न होने के कारण कठिन।
६. अधिगम अक्षम बच्चों की पहचान सिर्फ विद्यालय में। सीखने में अक्षम बालकों की संख्या बालिकाओं से अधिक।
७. कक्षा ४ एवं कक्षा ५ में सीखने में अधिगम अक्षम बच्चों की पहचान सरल।

मेरी खुद की पढ़ाने की संदर्शिका
स्वदर्शिका ?

क्या है स्वदर्शिका – मैनें सोचा और की अपनी तैयारी

यह किसी को दिखाने के लिए नहीं है। यह आपके व्यक्तिगत उपयोग के लिए है जिस भी रूप से आप चाहें, खुद अपने काम को बेहतर कर पाने के लिए। इसमें और पन्ने जोड़े जा सकते है।

सामान्य निर्देश :–

❖ प्रशिक्षण कार्यक्रम में प्रशिक्षक आपको किसी विशेष खंड को देखने और भरने के लिए कह सकते हैं। सिर्फ भरने के लिए उत्तरों को लिखने की जरूरत नहीं है। आप प्रशिक्षक द्वारा इंगित प्रश्नों के बारे में सोचें और चाहें तो हटकर किसी और कापी में उत्तर लिखें।

❖ यहाँ लिखनें के पहले थोड़ा सोचें जरूर। पेंसिल का प्रयोग करें। ताकि आप अपने अनुभव के आधार पर आगे जाकर अपने प्रश्नों को उत्तरों में बदल सकें।

❖ कोशिश करें कि यहाँ लिखी सामग्री उपदेशात्मक न हो जाए। यह आपके लिए है और इसमें **व्यवहारिक सुझाव** हों जो आपने दूसरों और अपने अनुभव से लिए हैं। अपने खुद के मार्गदर्शन के लिए। अपनी परिस्थिति को ध्यान में रख लें और वही शामिल करें जो आप वास्तव में करना चाहेंगे।

❖ अंत में, समय समय पर इस स्वदर्शिका को पढ़ते जरूर रहें, जरूरत पड़ने पर यहाँ लिखे बिन्दुओं को अनुभव के आधार पर बदलें। नई सोच, जानकारी हासिल करें। कक्षा के लिए योजना बनाने और अमल करनें के काम में लाएं और गोष्ठियों/प्रशिक्षण कार्यक्रमों में जरूर ले जाएं, ताकि साथी शिक्षकों के साथ अनुभव बाँटे जा सकें।

कैसी हो "मेरी शाला ?"

❖ मैं किस तरह की शाला देखना चाहूँगा/चाहूँगी ? उसमें क्या हो रहा होगा ?

❖ मैं किस तरह की कक्षा देखना चाहूँगा/चाहूँगी ? उसमें क्या हो रहा होगा ?

❖ आज से दो साल बाद में चल रही कक्षा, आज की कक्षा से कैसे भिन्न होगी ?

❖ कक्षा व शाला को इस मंजिल तक पहुँचाने के लिए मुझे और शिक्षकों को किस तरह के कदम उठानें चाहिए ?

अपने बारे में

❖ बचपन में अपनी शाला और शिक्षकों के बारे में मुझे क्या अच्छा लगता था ? (क्या ये तत्व मेरी शाला/कक्षा में हैं ?)

- बचपन में अपनी शाला और शिक्षकों के बारे में मुझे क्या बुरा लगता था ? (क्या ये तत्व मेरी शाला/कक्षा में हैं ?)
- मेरे प्रिय विषय कौन से हैं ? क्या उन्हें पढ़ाने में मुझे आनन्द आता है ?
- कौन से विषय मुझे कम अच्छे लगते हैं ? क्या इससे मेरा शिक्षण प्रभावित होता है ?
- एक शिक्षक के रूप में मेरी क्या ताकत है ? मैं कैसे उनका उपयोग कर सकता हूँ ?
- एक शिक्षक के रूप मेरी क्या कमजोरियाँ हैं ? मैं कैसे उनको दूर कर सकता हूँ ?
- मैं चाहता हूँ कि लोग मेरा वर्णन करते समय इन शब्दों का प्रयोग करें :

  ——

  ——

  ——

मेरे बच्चों के बारे में

- मेरी कक्षा में कितनें बच्चे हैं ?
- इन बच्चों की क्या पृष्ठभूमि है ? यह मेरे पढ़ाने और उनके सीखने को कैसे प्रभावित करता है ?
- क्या मेरी कक्षा के बच्चे नियमित रूप से उपस्थित हो पाते हैं ? अगर नहीं तो किन कारणों से ?
- जो नियमित नहीं आ पाते हैं उनके साथ कैसे काम करूँ ? ताकि उनके सीखने की प्रक्रिया रूके नहीं ! या कम से कम प्रभावित हो।
- जिन बच्चों के साथ मैं काम कर रहा हूँ उनके सीखने के स्तरों और गति में कितना अंतर/विविधता है ? क्या मैं अलग–अलग बच्चों को अलग–अलग तरीकों और अलग–अलग गतियों पर सीखने के लिए प्रोत्साहित कर सकता हूँ ? कैसे ?
- क्या मेरी कक्षा में ऐसे बच्चे हैं जिन्हें बराबरी का एहसास नहीं मिल रहा है ? मैं क्या कर सकता हूँ, ताकि सभी को बराबरी का एहसास मिले। सभी को महसूस हो कि मेरी कक्षा में उसके लिए जगह है।

मेरी शाला के बारे में

- मेरे शाला–भवन की क्या स्थिति है ? क्या मेरे शिक्षण पर इसका कोई प्रभाव पड़ता है ? कुछ ऐसा है जो हम साथी शिक्षक मिलकर इसके बारे मे कर सकते हैं ?
- मेरे शाला का भौतिक वातावरण कैसा है ? (सफाई, परिवेश, रखरखाव आदि) अगर इसमें सुधार की जरूरत है तो हम (शिक्षक, बच्चे, समुदाय) बारे में क्या कर सकते हैं ?
- अपनी शाला में हम कितने शिक्षक हैं ?
- शाला चलाने के लिए हम अपने बीच में जिम्मेदारी का बँटवारा कैसे करते हैं ?

अपनी कक्षा को गतिविधि–प्रधान कक्षा बनाना

(विचार पत्रक "गतिविधि क्या" देखें)

गतिविधि के लिए योजना/तैयारी :

- ❖ एक गतिविधि तैयार करते समय मुझे क्या ध्यान में रखना चाहिए ?
- ❖ मेरी गतिविधि में सामग्री की क्या भूमिका होने जा रही है ? सामग्री का चयन करते समय क्या ध्यान में रखूँ ?
- ❖ गतिविधि के बारे में मेरी समझ क्या है ?
- ❖ गतिविधि प्रधान कक्षा के बारे में मेरी समझ क्या है ? अपनी कक्षा में किस तरह का माहौल देखना चाहूँगा ? ऐसा माहौल बनाने के लिए क्या करूँ ?
- ❖ अपने और बच्चों के बीच, कैसे संबंध देखना चाहूँगा ? ऐसे संबंध बन सकें इसके लिए क्या कदम उठाऊँ ?
- ❖ गतिविधि प्रधान कक्षा में मेरी क्या भूमिका है ? और बच्चों की क्या भूमिका है ? हम दोनों अपनी भूमिका निभा सकें उसके लिए मैं क्या करूँ ?
- ❖ गतिविधि आधारित प्रक्रिया और पाठ्यपुस्तक का दो अलग–अलग चीज होना जरूरी नहीं। मैं यह कैसे सुनिश्चित करूँगा कि दोनों में संबंध बना रहे और गतिविधियों को पाठ्येत्तर रूप न दिया जाए बल्कि उनकी जगह पाठ्यक्रम में ही हो।

गतिविधि के दौरान

- ❖ गतिविधि करते समय मुझे क्या ध्यान में रखना चाहिए ?
- ❖ मैं यह कैसे सुनिश्चित करूँगा कि सभी बच्चों की सहभागिता रहे ? किस तरह, या किन तरीकों से गतिविधि के स्तर को बदल सकता हूँ ?
- ❖ मैं यह कैसे तय करूँगा कि गतिविधि बच्चों को वास्तव में सीखने की ओर ले जा रही है और बच्चे जो सीख रहे हैं उसे समेटा जा रहा है।
- ❖ मैं गतिविधि को आगे कैसे बढ़ा सकता हूँ ? बच्चे जो कुछ अनपेक्षित, उपयोगी कह देते हैं या कर देते हैं, उस मौके का फायदा उठा कर कैसे सीखने को बढ़ावा दूँ ?

सम्प्रेषण

- ❖ क्या हमने कभी अनुभव किया कि हमें जो कुछ कहना/सिखाना है उसे हम उपयुक्त तरीके से कह या सिखा पा रहे हैं ?
- ❖ हमारे बोलते/सिखाते समय बच्चे हमारी बात को रुचि/ध्यान से सुन रहे हैं ? यदि नहीं तो क्यों ?
- ❖ बच्चे हमारी बात को रुचि/ध्यान से सुनें तथा सक्रिय रहें इसके लिए हमें क्या करना चाहिए ?
- ❖ क्या हमारा उच्चारण सम्प्रेषण में बाधक तो नहीं बन रहा है ?

- ❖ क्या हमने कभी विचार किया कि हमारे सीधे सपाट कथनों के बजाय हाव–भाव, उतार–चढ़ाव, और सामग्री प्रयोग हमारे सम्प्रेषण को कहाँ तक प्रभावित करते हैं?
- ❖ हमारी तनाव ग्रस्त/प्रसन्न मुखमुद्रा व मानसिक स्थिति सम्प्रेषण पर कितना प्रभाव डालती है ?
- ❖ हमारे श्यामपट्ट लेख की स्पष्टता/अस्पष्टता सम्प्रेषण को कितना प्रभावित करती है ?

सीखने की प्रगति के लिए योजना बनाना और समीक्षा

- ❖ मैं दिवस के लिए कैसे योजना बनाऊँगा ?
- ❖ सप्ताह के लिए कैसे योजना बनाऊँगा ?
- ❖ महीने के लिए कैसे योजना बनाऊँगा ?
- ❖ जो चाहा गया है, वह वास्तव में हो सके, उसके लिए कक्षा में जो हो रहा है उसकी समीक्षा कैसे करूँगा ? अपने योजना को उसके संदर्भ में कैसे बदलूँगा ?

व्यावहारिक पक्ष

- ❖ बच्चों की संख्या किस तरह मेरे शिक्षण को प्रभावित कर रही है ? मैं स्थिति में कैसे सुधार ला सकता हूँ ?
- ❖ एक से अधिक कक्षाओं में कैसे गतिविधियाँ करूँगा ?

अपने लिए संकेत

भाषा शिक्षण (विचार पत्रक देखें)

- ❖ भाषा शिक्षण में क्या एप्रोच/उपागम अपनाने की जरूरत है ?
- ❖ भाषा शिक्षण में मुझे किन मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है ?
- ❖ भाषा सीखने में मेरे बच्चों को क्या कठिनाइयाँ हैं ?
- ❖ भाषा शिक्षण की मुश्किल किस तरह अन्य विषयों के सीखने को प्रभावित कर रही है ?
- ❖ अपनी कक्षा में भाषा सीखने की प्रक्रिया को बेहतर बनाने के लिए मैं क्या कर सकता हूँ ?

गणित शिक्षण (विचार पत्रक देखें)

- ❖ गणित शिक्षण में मुझे किस एप्रोच/उपागम को अपनाने की जरूरत है ?
- ❖ गणित शिक्षण में मेरे सामने आने वाली मुश्किलें क्या हैं ?
- ❖ गणित सीखने में बच्चों के लिए प्रमुख कठिनाइयाँ ?
- ❖ अपनी कक्षा में बेहतर गणित शिक्षण के लिए मैं क्या कर सकता हूँ ?

परिवेशीय अध्ययन (विचार पत्रक देखें)

- ❖ परिवेशीय अध्ययन में मुझे कक्षा में किस अप्रोच/उपागम को अपनाने की जरूरत है ?

- ❖ परिवेशीय अध्ययन में मेरे सामने प्रमुख कठिनाइयाँ क्या हैं ?
- ❖ परिवेशीय अध्ययन में बच्चों को आने वाली मुश्किलें क्या हैं ?
- ❖ परिवेशीय अध्ययन का शिक्षण बेहतर हो सके इसके लिए मैं क्या कर सकता हूँ ?

अन्य विषयों का शिक्षण

मूल्यांकन (विचार पत्रक देखें)

- ❖ मूल्यांकन की मेरी समझ क्या है ?
- ❖ क्या बच्चों के मूल्यांकन से बच्चों के विकास/सीखने–सिखाने की प्रक्रिया की योजना बनाने में मदद मिल रही हैं
- ❖ मेरे मूल्यांकन के तरीकों से बच्चे मजा लेते हैं या डरते हैं ?
- ❖ मूल्यांकन में मेरी अपनी कठिनाइयाँ क्या हैं ?
- ❖ क्या मुझे नए औजार (टूल्स) बनाने होंगें ?
- ❖ क्या बच्चों के संज्ञानेत्तर पक्षों (आदतें, व्यवहार, दिन–प्रतिदिन के कार्य, चारित्रिक विशेषता, नैतिक मूल्य...........आदि) का मूल्यांकन भी मेरी योजना में शामिल है ?
- ❖ मूल्यांकन का रिकार्ड रखने के लिए मेरे पास कौन–कौन से औजार हैं ? इनका बेहतर उपयोग कैसे करूँ ?
- ❖ विद्यालय व्यवस्था को बेहतर बनाने में अपने स्तर से क्या–क्या कर सकती हूँ ?
- ❖ विद्यालय व्यवस्था में समुदाय का सहयोग कब और कैसे ले सकती हूँ ?

मैं अपने काम में कैसे बेहतर हो सकता हूँ ?

- ❖ क्या पढ़ूँ ?
- ❖ क्या प्रयोग/अवलोकन करूँ ?
- ❖ किससे चर्चा करूँ ?
- ❖ क्या एन.पी.आर.सी./बी.आर.सी./डॉयट से कोई मदद मिल सकती है ?

गतिविधि बैंक : मेरे पास क्या है ?

- ❖ मेरे पास क्या–क्या और कितना है ?
- ❖ गतिविधियाँ, कविताएं, गीत, पहेलियाँ, कहानियाँ, खेल, चित्र चित्र, उपकरण, सामग्री आदि जिनकों मैं कक्षा में उपयोग कर सकता हूँ।
- ❖ और कहां से इकट्ठा करूँ ?